कुण्डलियारामायण।

कविकुलतिलक गोस्वामी

तुलसीदासजीकृत।

कलकत्ता

३८।२ भवानीचरणदत्तस्ट्रीटस्थित

वङ्गवासी ष्टीममेशीन प्रेसमें

श्रीयुतविहारीराय द्वारा

मुद्रित और प्रकाशित।

सन् १९०३ ई०।

कुण्डलिया रामायण ॥

दहन अमङ्गल सकल दुख गजमुख सबसुखदानि। मतिगतिरति रघुपतिचरण विघ्नहरनकी बानि॥ विघ्नहरनकी बानि जानि सज्जन सब गावत। भक्ति मुक्ति वर देव शेष शङ्करसुर ध्यावत॥ शङ्कर ध्यावत शेष सुर रिपुगण खलजन गहन। कह तुलसिदास शङ्करसुवन भजत भक्त भवभयदहन॥ १॥

दीनदयाल दया करौ दीन जानि शिव मोहिं। सीताराम सनेह उर सहज सन्त गुण होहिं॥ सहज सन्त गुण होहिं यथाप्रद लाभ दुःखसुख। कर्मविवश जहँ जाउँ तहाँ सियराम कृपारुख॥ रामकृपारुख नित रहौं जगतजनित संशय हरौ। कह तुलसिदास शङ्कर उमा दीनदयाल दया करौ॥२॥

रामचरित शतकोटि शेष शारद शिव भाखे। नारद शुक सनकादि वेद कहि बीचहि राखे॥ बीचहि राखे चरित पार कहि पावत नाहिन। कहि कहि हारे सकल रामयश कहत सिराहिन॥ नहिं सिराहिं रघुबीरगुण सो तुलसी मनमें डरत। भजन भाव वेदन कहा कहे चरित भवनिधि तरत॥ ३॥

पुत्रयज्ञ नृप कीन जोरि मुनिगण द्विजकुलवर। कह वशिष्ठ भे सिद्ध दीन हवि लै प्रसाद कर॥ लै प्रसाद कर दीन देहु भामिनि नृप जाई। सुनि दशरथमन हर्ष सकल प्रियनारि बुलाई॥ नारि बुलाई कौशला कैकेयी युग भाग कर। मन अनन्द रानी नृपति दीन्ह सुमित्रहि हाथ धर॥ ४॥

मङ्गलमयी विचित्र द्युति प्रकट भई गृह आनि। ब्रह्म-सच्चिदानन्द उर प्रकट भये सुखखानि॥ प्रकट भये सुखखानि हानि दारिद दुख नाश्यो। देवन लह्यो अनन्द महौ मन मोद प्रकाश्यो॥ महौ मोद द्विज सकल सन्त सज्जन यश गावत। ब्रह्मादिक सब देव अवधपुर चलि आवत॥ आवत वर्षत सुमन धन तुलसी कहि जय जय जई। नाक नगर अहिपुर भुवन प्रकट भई मङ्गलमई॥ ५॥

मास भयो शुभवार योगवर नखत विराजत। तिथि नभ जल महि विमल दिशा विदिशा सब भ्राजत॥ भ्राजत सरयू अवध देवगण जय उच्चारत। बर्षत सुमन प्रशंस हंस निजबंस निहारत॥ हारत खलगण मनमलिन प्रकट भये सुख दुख गयो। तुलसी रघुबर प्रकट भे मास एकको दिन भयो॥ ६॥

सुनि भूपति सुतजन्म मगन नहिं देह सँभारत। उठे भवन कहँ दौरि बोलि तब गुरुहि प्रचारत॥ गुरुहि प्रचारत चले बिप्र सँग लै मुनिनायक। भूत भविष्य वर्त्तमान ज्ञान सब जानन लायक॥ लायक सुत मुनि समुझि कै जातकर्म सब विधि कियो। हेम हीर नीरज सुपट महि हय गय भूपति दियो॥ ७॥

याचक जो जेहि काज ताहि नृप पूछि दिवावत। वृन्द वृन्द बर नारि विमल स्वर सोहिल गावत॥ गावत सोहिल सुनत भूप हँसि हेरि बुलावत। पट भूषण मणिमाल लाल सुख नेहि पहिरावत॥ पहिरावत गज तुरग रथ सर्वस दै दै छाँड़ि छल। पुनि तुलसी जहँ तहँ भरो रामकृपा सब वाहि थल॥ ८॥

पुरी मगन नर नारि वर्ण चारिउ प्रसन्न सबि। प्रति गृह गावत गीत कलस मणिचौक भरो छबि॥ भरो चौक गजमुक्त अगर कुमकुम मृगमद घन। कुसुम सुगन्ध अबीर रहेउ भरि दिशा विदिशि तन॥ दिशा विदिशि सुख भरि रह्यो भामिनि

बहु प्रकटी दुरी। अहिनाक भूमितल सुख भरयो जिमि सुख भो रघुपतिपुरी ॥ ९ ॥

भूप भामिनी दोउ सुखद सुन्दर सुख जाये। कर्म क्रिया सो करे तोषि याचक पहिराये ॥ पहिराये मन मोद चारिसुत लखि सुख राजा। रानी परमहुलास दास दासी सब साजा ॥ साजा शहर अनन्द बड़ बाजा बहु बाजन लगे। सब कोउ कहत सराहिके भागभाल सुखके जगे ॥ १० ॥

भूसुर सुर गोधरनि सन्त सज्जनके काजे। प्रभु धारयो तन मनुज दनुज सुनि विकल सुलाजे ॥ लाजे खलगण मलिनन-लिनहिज उदय भानुकर। अघउलूक छपि गये तेज अहिपुर सुरपुरधर ॥ सुरपुरधुनि कुसुमावली जयति राम रघुवंश जय। जय दशरथकुलकलश अवधनरनारि कहत भय ॥ ११ ॥

गृह गृह बजत बधाव नारि नर अवध अनन्दित। चौक कलश प्रतिद्वार लसत सुरतियगण वन्दित ॥ वन्दत सुर-गण सुमुख बन्दिगण बिप्रवेदधुनि। भरि भरि मुक्ताधार देखि सुत भाग अधिक गुनि ॥ अधिक गान सोहत भवन रामजन्म मङ्गल सजत। नरनारि वारि तन धन सबै सुरपुर जयदुन्दुभि बजत ॥ १२ ॥

नाम धरयो मुनि हेरि राम पुनि भरत लषनवर। शत्रु-घमन शुभनाम दीन मुनि लिखि भूपति कर ॥ भूपति रानि-न दीन मगन तनु लहेउ सकल सुख। गान निशान समान धरणि आकाश एक रुख ॥ यकटक निरखत सुमनगण मन मलीन खलगण भये। चारि चारु सुन्दर सुवन सुकृत भूप तरुफल नये ॥ १३ ॥

सुन्दर सुतवर गोद मोद भरि मातु दुलारत। निरखि दनव छविसिन्धु सकल तन मन धन वारत ॥ वारे तनमन देव भूपके

भाग सराहत। शिव शनकादिक ब्रह्म चराहिचर मनसुख चाहत॥ चाहत नित आवत अवध मङ्गलमय मूरति लखत।, रामजन्मसुखरसरसिक तुलसिदास नयननि चखत॥ १४॥

माई बालक अनरखो दूध पियत नहिं आजु। रोवत सोवत नेकु नहिं दृष्ट नजरिको साजु॥ दृष्ट नजरिको साजु रहैं नहिं बैठे ठाढ़े। बड़ो शोच उर भयो नीर नयननते बाढ़े॥ बाढ़े करुणा कौशलहि हाय दिवावत धायकै। पालन गोद पिआय पय राम सोवावत आयकै॥ १५॥

अम्बू धारयो अवध पग अङ्गहि भस्म लगाय। रामचन्द्रमुखसुधाकर चितचकोर ललचाय॥ चितचकोर ललचाय नाद भृङ्गीको कीन्हे। घर घर आगम कहत बोलि कौशल्या लीन्हे॥ कौशल्या गृह बोलिकै शुभ आसन आदर करयो। सुत पाँयनतर लाय माय हाथ अम्बू धरयो॥ १६॥

साँई आछे गुण कहौ जो कछु यामें होय। सब गति जानत सबहिको तुमहिं कहत सब कोय॥ सब कोई परचो कहत बड़े योगनिधि योगी। जो माँगिहौ देहौं सोइ तोको करौं सुधाको भोगी॥ करौ सुधाको भोग जन्म भरि राम लषणके पाछे। सुनि सुनि बचन हँसत मन शङ्कर मातु बचन सुनि आछे॥१७॥

माई बालक तोर यह बड़ो भागको मूल। याके दर्शन जात है सब अन्तरको शूल॥ सब अन्तरको शूल हरौ याते सुख पैहौ। कछु दिन बीते सुनौ एक मुनि सँग करि देहौ॥ देहो मुनि सँग लाय व्याह पुनि पाती आई। दशरथ सुवन विवाहि सहित घर ऐहैं माई॥ १८॥

अद्भुत कर्मन करी सकल खलगण संहारन। महि द्विज पालहि सन्त शोच सुर करहि निवारन॥ करहि निवारन दोष मातुपितु आज्ञाकारी। तोरहि शिवको धनुष सुयश तिहुँ पुर

बिस्तारी ॥ विस्तारी सुख सम्पदा सुनु कौशल्या तोर सुत। वचन मृषा बोलत नहीं मातु प्रतीति सनेहयुत ॥ १९ ॥

कह्यो कैकयी सुवनको लक्षण सबकर देखि। कौशल्या-सुतभक्त यह मन क्रम वचन विशेखि ॥ मन क्रम वचन विशेषि रामपद प्रीति सुहावन। सोवत जागत ध्यान नाम रसना रसपावन ॥ पावन तिरहुति व्याहि हैं याते सुखसम्पति लहो। सुयशसिन्धु साँचो सुवन समुझि देख आगम कहो ॥ २० ॥

सुनहु लखनकी मातु सुलक्षण सुवन तुम्हारे। निज भाइ नसों प्रीति प्रबल रणके जितवारे ॥ जितवारे बल बाहु गुणनि पूरे सब भाई। राम सङ्ग शुभपुरी तहाँ सब होहिं सगाई ॥ होहिं सगाई जनकपुर जनककन्यका आनिकै। सत्य जानु रानी बचन झूँठ न कहौं बखानिकै ॥ २१ ॥

सुनती मन रानी मगन मुक्ता थार भराय। लेन कह्यो हँसि कौशला रामहिं दीन कुवाय ॥ रामहिं दीन कुवाय हाथ धरि देउ अशीशा। बालक रहु कल्याण डीठि मुठि डारहु खीशा ॥ खीस करहु प्रभु रोग सकल मन्त्रन पढ़ि बानी। बोली डारे सुवन हाथ जोरे सब रानी ॥ २२ ॥

बोल्यो योगी योगनिधि सुनहु कौशलामाय। डीठि मूठि अनखानि अब देहौं सकल बहाय ॥ देहौं सकल बहाय बाल कबहूं नहिं रोई। पलका गोद हिंडोर सुमुख सब थल शिशु सोई ॥ सब थल शिशु सुख रही होय नहिं कबहूं रोगी ॥ भृङ्गी शब्द सुनाय चल्यो मन हँसिकरि योगी ॥ २३ ॥

भूपति रानी मन मगन शिशु सब अतुल निहारि। गोद मोद मन गावती राम दुलारि दुलारि॥ राम दुलारि दुलारि वारि तन मन सब डारैं। चौरकर्मको सुदिन बैठि कुलगुरुहि हँकारैं ॥

गुरुहि हँकारि बिवेक सुफल करि मङ्गलबानी। गावहिं गीत विचित्र मोदमय भूपति रानी॥ २४॥

सन्तोषे माँगन सकल गुरु लिय द्विज पहिराय। बालक कोशलपालके चिरञ्जीव सब भाय॥ चिरञ्जीव सब भाय देत आशिष अनुकूले। नृप रानीके सुकृत सुतरु कहे अरु फूले॥ फूले अवध नारिनर ते अति आनँद पोषे। नाक नगर अहि-नगर नारिनर मनवाँछित सब तोषे॥ २५॥

आँगन रानी चलन सिखावत चारो सुत कर लाय। गिरत परत उठि चलत हँसत पुनि रोवत रहत रिसाय॥ रोवत रहत रिसाय अंगुली टोपी डारैं। सुक्तनमाल विदारि नयन भरि नीर निहारै॥ नीर निहारै हँसत सुनत अति तोतरि बानी। भजत भवनको पैठि धरत लै आँगन रानी॥ २६॥

भूप हर्षि करवायो रुचिसों करणबेध उपवीत। छोटे धनुष बाण कर लीन्हे समुझन लागे नीत॥ समुझन लागे नीति वेद विद्या गुरु दीन्ही। धर्म कर्म गति अगति स्मृति श्रुतिमग जेहि कीन्ही॥ श्रुतिमग जेहि कीन्ही जगत जाहि सिखाये सब सिख्यो। धर्म प्रकट जग करनको परब्रह्म रूप घर दख्यो॥ २७॥

जाके नामप्रभावते जन्ममरणदुख जाय। वेद शेष शारद शिवा शिवको अगम दिखाय॥ शिवको अगम देखाय भेद ब्रह्म-हु नहिं पायो। भक्तनके हित सोय कौशला उरमहँ आयो॥ कौशल्या के उर बसे दशरथसुत कहि गावते। काम क्रोध मद लोभ दुख नाशै नामप्रभावते॥ २८॥

विश्वामित्र महाऋषय विपिन बसैं मुनि सङ्ग। योगयज्ञ होमादि व्रत करत दनुज खल भङ्ग॥ करत दनुज खल भङ्ग हृदय मुनि मन्त्र विचारो। हरि अवतरे सुअवध हरन महि-

भारन भारो॥ भारो सुख उपजायके हरि होई नयननि विषय। सरयूसरि स्नान करि गे दरबार महाऋषय॥ २९॥

सुनि राजा सहसा उठे मिले धाय परि पाँय। लै आये भीतर भवन शुभ आसन बैठाय॥ शुभ आसन बैठाय नारि युत मुनिवर पूजे। उदय भयो निज भाग मोहि सम सुकृत न दूजे॥ दूजे आपुन जानिये पदरजको सेवक सदा। कहिय कृपा करि काज निज करहुं तुरत मङ्गलप्रदा॥ ३०॥

सुनि भूपति द्विज मिल गाय महिशोच निवारण। मम आश्रय खल दनुज करत उतपात अपारन॥ पार न पावहिं मुनि विकल रयन दिवस सङ्कट परे। धर्मजात श्रुतिसेतु सकल बल खल हरे॥ हरे विपति दारुण जबै राम लषण जो देहु मति। तुमकहँ यश इनको सुफल गुनहु न मन सुनि भूमिपति॥ ३१॥

सुनते राजा सूखि गो कमलवदन कुम्हिलान। नाहक अनि दाह्यो हृदय माँगहि जीवन प्रान॥ माँगहि जीवन प्राण राम लच्छण मिलि देऊ। जाहि निरखि रहै नयन पलक निरखत नहिं लेऊ॥ लेउ अयश पातक सबै सुनि मुनि मनमें गुणि कहै। माँगहु तन धन धेनु महि राम दिये किमि तनु रहै॥ ३२॥

कह बशिष्ठ राजा सुनहु सुत मुनिपतिकहँ देहु। इनको कृपा कृपालकी कुशल आय हैं गेहु॥ कुशल आय हैं गेहु दनुज सब करहिं सँहारन। सिद्ध शुद्ध करि होम सुयश जगमें विस्तारन॥ विस्तारन मङ्गल सुवन आन भाँति नहिं मन गुनहु। सौंपहु विश्वामित्रको कह बशिष्ठ भूपति सुनहु॥ ३३॥

गुरु बशिष्ठके बचनको कैसे तजैं नृपाल। राम लषणको बोलिके सौंपे मुनिहि कृपाल॥ सौंपे मुनिहि कृपाल शीश सब

सभा नवायो। कौशिक दियो असीस मनहुँ जप तपफल पायो॥ पय बहाय बारिजनयन उठे मौन धरि भवनको। उत्तर कछु न मुख कढ़्यो गुरु बशिष्ठके बचनको॥ ३४॥

वेदमन्त्र दै सकल अङ्ग शत्रुनके मारण। नींद भूख अरु प्यास त्रास सब अशुभनिवारण॥ अशुभनिवारण पन्थ सुपथ मङ्गलमय सुन्दर। बड़ो भाग निज समुझि करत आयसु प्रभु सादर॥ सादर पूछत वेदगति मृग तरु भूधर भूमितल। पाठ करावत गुण कहत वेदमन्त्र दै दै सकल॥ ३५॥

मार्यो बीचहि ताड़का एक बाण श्रीराम। मुनि चितवत चकृत खड़े गई हर्षि सुरधाम॥ गई हर्षि सुरधाम रामको मुनि मन चीन्हे। आश्रम निज प्रभु पूछि यज्ञ आरम्भित कीन्हे॥ कीन्हे यज्ञ अरम्भ प्रभु धनु धरि बाण सुधारिकै। खल सुबाहु मारीच सँग धायो धूम निहारिकै॥ ३६॥

दल मारे सब लषण अनलशर जारि सुबाहै। प्रभु मारीचहिं उदधि पारकरि बाण चलाहै॥ बाण चलाहै अफल सुफल करि होमबिधानै। वर्षत सुर शुभ कुसुम अशोभित कृपानिधानै॥ कृपानिधानहि जानिकै यज्ञभाग दै अमियफल। धनुषयज्ञथल जनकके चले राम ऋषि त्यागि थल॥ ३७॥

गौतम ऋषिकी भामिनी तनपषाण जेहि ठौर। गये लषण रघुवंशमणि मुनि कौशिक शिरमौर॥ मुनि कौशिक शिरमौर पूछि बूझो सब कारण। दारुण दाह बिचारि पाँव धरि कीन्ह निवारण॥ कीन्ह निवारण पाँयको जय कहि उठि द्युति दामिनी। तुलसी बिनती मृदु करत गौतम ऋषिकी भामिनी॥ ३८॥

जय जय जगदातार प्रभु हरण घोर महिभार। दीनबन्धु दानव दहन सब गुण रूप उदार॥ सब गुण रूप उदार भजत

शिव शुक सनकादी। पावत थाह न चरित मध्य अन्तहु नहिं पादी॥ आदि जन्म जड़ कुकृतकरि भई शाप पापनमई। आजु परसि पदपद्मरज राम सुकृत मन्दिर भई॥ ३९॥

शापपापको दुर्ग कठिन रचि कर्मन राख्यो। मन बुधि चित्त हम श्रृङ्गभरे अघवस्तुनि चाख्यो॥ वस्तु सकल मलराशि काम मद दम्भ सुभटघन। सुकृत सत्यरण जीति कर्मको अमल सबै तन॥ तन पग सुरगण गाय प्रभु रजवत्तद रुख अनल गहि। रिपुहि सहित मम कर्म रूप शाप पापको दुर्ग दहि॥ ४०॥

अभिमत फलदातार देवतरुवर समकारन। कर्मकुमतिमल लाग कृपाकरि कीन निवारन॥ कीन निवारन पाप भई सुनि बरकी भामिनि। अब वर दीजिय मोहिं चरणरति दिन अरु यामिनि॥ दिन अरु यामिनि रत रहौं चरण हरण अहि-भार हो। तुलसिदास वर पाय कहि जय रघुपति दाता रहो॥ ४१॥

लखि गति सुर मुनि हर्षि बर्षि शुभसुमन सराहत। अघ-रणशरण समर्थ घोर भवसिन्धु निबाहत॥ सिन्धु निदाहत अग-मसुगम बरदायक लायक। कुमति कुकर्ष कुरेख कपट कलि-कलुषनशायक॥ कलुषनशायक राम प्रभु तुलसिदास भजि तजि करष। मन बच उर कर्मनि भजहु लखि गति सुर मुनिमन हरष॥ ४२

चले हर्षि मुनि सङ्ग रामलषण मगमाहीं। वन उपवन मृग विहँग विटप लखि पूंछत जाहीं॥ पूंछत मुनि सब कह-त न्हाय सुरसरि रघुराई। कहत कथा इतिहास जनकपुर पहुंचे जाई॥ पहुंचे प्रभुपुर निकट लखि बाग तड़ागनि अति भले। खग मृग मधुप समाजयुत जनकनगर देखन चले॥ ४३॥

बापी सुभग सरोजयुत सरवर विविध मराल। मानौं

अगखित मानसर शोभा देत विशाल॥ शोभा देत विशाल विमल जलसुधा सपूरे। मणिगण पुरट बँधान नारिनर मज्जत भूरे॥ मज्जत सुर मुनि आय जनु पर्व्व मानसर पाय जग। लहत चारिफलराशि जलनापी बापी सर सुभग॥ ४४॥

सुन्दर चहुँ दिशि बाग बन कुसुमित फलित अपार। जनु सुरधरकी बाटिका बसी सहित परिवार॥ बसी सहित परिवार कीरकोकिलधुनि राजै। पथिकन लेत बुलाय त्रिविध विधि पवन समाजै॥ पवन समाजै सुरभि सुख जनु वसन्त ऋतु गृह सघन। कह तुलसिदास प्रभुपुर निरखि सुन्दर चहुँ दिशि बाग बन॥ ४५॥

परे नृपति सजि सैन मत्त गज रथ हय राजत। नृत्य गान सुख थान सुभग दुन्दुभि वर बाजत॥ बाजत बन्दी सूत यूथ यूथनि भट गाजैं। वनितादिक शुभ गान करहिं सुरतिय लखि लाजैं॥ लाजै लखि अमरावती सुरपुरकी शोभा हरे। विविध वृन्द इन्द्रादि सुर सैन साजि जनपुर परे॥ ४६॥

धवल धाम चित्रनिखचित कलश मनहुँ रविज्योति॥ जगमगात खचानि पुरट प्रकट दामिनी होति प्रकट दामिनी होति मोति मणि झालक झरोखनि। भामिनि भूषण सजत मनहुं सुरतियतन धोखनि॥ धोखनि तन सुरबाम सब धाम धाम सब थल नचति। जनकनगर छविमय चकत हाट बाट मणिमय खचति॥ ४७॥

सुनि श्रवन न नरपाल ऋषय आगमन अनन्दित। भूसुरवर गुरु ज्ञाति साथ मुनिपद शिर बन्दित॥ बन्दित नृपहि विलोकि मिले कौशिक मुनिनायक। भये विदेह विदेह निरखि दोउ सुत सब लायक॥ सब लायक रघुनाथ कहि नरपति

निरखि बिशालको। देखि आनुकुलभूषणहि तनमनवश नर-पालको॥ ४८॥

निवशराव भये प्रेमवके निरखत तनशोभा। लोचन भये चकोर रामसुखमधिरस लोभा॥ लोभा सकल समाज परस्पर चाहत रामै। धीरज धरि कृप कहत बूझि सुनि सब गुणधामै॥ सब गुण तेज प्रतापमय काके सुरतरुफल नये। कहिय कृपाकरि कृपानिधि ये बालक काके भये॥ ४९॥

कै मुनिमणि कृपमणि किधौं योग यज्ञफल आहि। गज-पति पशुपति लोकपति मम संशय मनमाहि॥ मम संशय मनमाँहि ज्ञानगति गिराविनाशो। वरवस इनवश होत तजत सुखरस अविनाशो॥ अविनाशो अवलोकिये युगलरूप निज सँगरयो। कहिय प्रकट सन्देह मन कै मुनिमणि कृपमणि किधौ॥ ५०

जपतप व्रतरतधर्म्म जगत जहँलगि शुभकर्मनि। दयाक्ष-मा।दकनेमक्रिया आचार चार गनि॥ चार वेद सब भेदयोग विधि साधत योगी। आतम अनुभवरूप ब्रह्मसुख पावत भोगी॥ पावत भोगी योगवश सो प्रकटत कबहुँक हिये। सो फल मुनिनायक किधौं जप तपबलने प्रकट किये॥ ५१॥

अलख अगोचर रूप हरि जो वरणत श्रुति शेष। जाके हित विधि देव मुनि ध्यावत गणप महेश॥ ध्यावत गणप महेश योग बलन नहिं पावत। जपतपव्रत कृतकर्म्म धर्म्म धन हृदय बसावत॥ हृदय बसत बहुरूप जब सकल सिद्धि सब सुख भरि। प्रकटो कीन सोइ रूप मुनि अलख अगोचर भूपहरि॥ ५२॥

कीधौं मदन विशेष सँग मुनिनायक वश कीन। ऋषि तपतेजप्रतापते सेवत पदलवलीन॥ सेवत पदलवलीन अघुको वैर सँभारयो। चाहत आपु सहाय मन्त्र मनमाँझ

निचारयो॥ चारयो विधि सेवासजे युगुलरूपछवि देखिये। बारनार भूपति कहैं सुनि मुनि मदन विशेषिये॥ ५३

सदा ज्ञान वैराग्यसों रह्योरहत मन मोर। ब्रह्म सच्चिदानन्दघन चितवत चन्द्र चकोर॥ चितवत चन्द्र चकोररूप हरि सुधलखि रानी। निरखत बालक नयन तौन सुख जात न जानी॥ जात न जानी ब्रह्मसुख छक्यो प्रेम अनुरागसो। सो मन इनके बश रह्यो लख्यो न ज्ञान विरागसो॥ ५४

सुनत भूपके प्रिय वचन पुलकि कहैं मुनिराज। जो कछु कहौ सुसत्य सब तुमहिं विदित सब काज॥ तुमहिं विदित सब काज राज दशरथके जाये। मखहित आये माँगि आपुके नगर सिधाये॥ नगर सिधाये आपुसे राम लखन धनुशर धरे। महिरक्षक भक्षक असुर सुनत भूप आनँद भरे॥ ५५॥

भाग जानि अनुराग रूप चले लिवाय निकेत। आदर आश्रम आनिके पूजे प्रेम समेत॥ पूजे प्रेम समेत निरखि नर नारि सुखारी। रघुकुलभूषण देखि सराहत सुकृत सँभारी॥ सुकृतपुञ्ज राजा जनक कहि पुर नर पद लागही। को जानै काके सुकृत याग भाग अनुरागही॥ ५६॥

कमलनयन श्रीरामछवि मरकतमणि घनश्याम। सुभग गौर लक्ष्मण दहन दामिनि वरण ललाम॥ दामिनि वरण ललाम अङ्ग अगणित छवि सोहैं। जनकनगर नरनारि चकित अद्भुत छवि जोहैं॥ जोहैं मन मोहैं सकल को है पाव पार कवि। तुलसिदास बैननि कहै कमलनयन श्रीराम-छवि॥ ५७॥

देखे मुनिसँग आज री बालक युगल अनूप। श्यामगौर-सुन्दर बदन मनहु मदन युगरूप॥ मनहु मदन युगरूप विरचि

विधि स्वकर बनाये। निज सुकृतके पुञ्ज जनकपुर देखन आये॥ देखन आये कुवँर दोउ विधि रचि राख्योकाज रौ। सियवरयोग्य संयोग यह समुझि देखु सहि आज रौ॥ ५८॥

अपर कहत सखि सत्य है एक कठिन हठिकर्म्म। प्रण विदेहको धनुष यह उठै न गिरिसमधर्म्म॥ उठै न गिरिते गरु वाल मृदु अतिसुकुमारे। सो असमञ्जस कठिन मेटि को योग सँवारे॥ साँवर कुवँर प्रतापवल मुनिगण कहत सुसत्य हैं। शम्भुप्रताप विदेहको पुण्य भञ्जि धनु सत्य हैं॥ ५९

आयसु पाय मुनीशको भोर लषण रघुराय। सुमनहेत उपवन गये श्यामगौर दोउ भाय॥ श्यामगौर दोउभाय जानकी जाय निहारे। गिरिजापूजन हेत मध्य उपवन पग धारे॥ पग धारे नयननि लखे राजकुमार निहारिके। सो सुख तुलसी कहै किमि कहि न जाय सुख चारिके॥ ६०॥

रामसियाको मिलनसुख वेद न पावहिं पार। प्रीति प्रेमपरमिति सुमिति प्रीतमगति रतिसार॥ गतिरतिसार विचार कहत थकि रहत विचारी। सो मैं कहौं विवेक कवन मति गति संसारी॥ मतिगति शङ्कर शारदा कहि न सकत सुखसरसको। तुलसिदास केहि विधि कहै रामसिया सुखदरशको॥ ६१॥

पूजि विविध विधि पाँय परि विनती सीय सुनाय। आदि अन्त त्रयलोक तू स्ववशविहारिणि माय॥ स्ववशविहारिणि माय मनोरथ जानति हौके। प्रकट प्रभाव प्रताप अगम बरदान शचीके॥ शची शारदा हरितिया सेय सेय सब सुकभरि। जय जय जय गिरिपतिसुता विविध विनय सियपायँ परि॥ ६२

वचन प्रसाद सुपाय सिय हर्षि चली निजधाम। सो छवि हृदय निरूपकरि गुरुपहँ गवने राम॥ गुरुपहँ गवने राम जानकी भवन सिधाई। सुमन दिये मुनि हाथ राम कहि कथा

सुनाई॥ कथा सुहाई सुनत मुनि सतानन्द आवत भये। जनकविनय कहि मोद लहि रामलषण आशिष दये॥ ६३॥

आजु भूप बनि बनि चले रङ्गभूमि शिरमौर। पावक पानी पवन महि सुर नर मुनि इकठौर॥ सुरनर मुनि इकठौर आपको जनक बुलायो। कौतुक देखन चलिय सतानँद वचन सुनायो॥ वचन कहे मुनि रामसो चलहु तात अवसर भले। काको यश दशदिशि विदित आजु भूप बनि बनि चले॥ ६४॥

राम लषण कौशिक सहित सतानन्द भगवान। चले रङ्गभूमिहि सकल मङ्गलमोदनिधान॥ मङ्गलमोदनिधान नारिनर गृह तजि धाये। नगर बगरमें बात भूपसुत देखन आये॥ देखि जनक परि पगनि पूरि प्रेम आनँद सहित। आसन आदर देयकरि रामलषण कौशिक सहित॥ ६५॥

रामरूप नृप देखिके द्युति मुखकी भइ चौन। रविप्रताप निरखत मनो उडुगनज्योति मलीन॥ उडुगनज्योति मलीन दीन बलहीन बिराजत। जड़खलदल दलमलेउ साधु सुर लज्जन गाजत॥ गाजत दुन्दुभि सुमन सुर मगन नारिनर पेखिके। थकित चकित पल नहिं लगत रामरूप नृप देखिके॥ ६६॥

जो जाके उर भावना देख्यो रामशरीर। कोउ शिशु कोउ प्रभु मित्र अरि स्वामि सखा बलवीर॥ स्वामि सखा बलवीर धीर धरि प्रभुहि निहारैं। वर्षत सुर शुभकुसुम देव मुनि जयति उचारैं॥ जयति उचारि समाज लखि जनक बुलाई जानकी। सतानन्द आनो तुरत खानि सकल कल्यानकी॥ ६७

मिथिलापुरके नारिनर सिय रघुबीर निहारि। विनती करहिं विरञ्चिसन अञ्चल अञ्जलि धारि॥ अञ्चल अञ्जलि धारि देहु बरदान विधाता। राम जानकी योग्य जोरि मिल-

वह यह नाता॥ नात जुरै नृपप्रण टरै भूपति जाय लजाय घर। यह संयोग विचारि कहि मिथिलापुरके नारिनर॥ ६८॥

माल जलज युग हाथ अतुल छवि सिय पग धारी। जगत-जननि सुखखानि निरखि मोहे नरनारी॥ नारि मध्य बर जानकी रघुवर पद अनुराग हिय। देखत सुर नर मुनि मगन दीन्हे नयननिमेख सिय॥ त्यागि सङ्कोच रामहि लखे नयन मूँदि छवि हृदय भरि। रङ्गभूमि सिय पग धरे जलज माल युग हाथ धरि॥ ६९॥

जनक बोलि बन्दी सकल कहत्रो कहो प्रण जाय। देव दनुज महिपति मनुज सबको देहु सुनाय॥ सबको देहु सुनाय आठ दश सहस सिधाये। चहुँ दिशि हाथ पसारि सुनहु भूपति चित लाये॥ चित लाये प्रण जनकको धनुष धरत्रो यह रङ्गथल। कर उठाय भञ्जै नृपति वरै जानकी वाहि पल॥ ७०॥

हरिगिरिते गरु जानिये कमठपृष्ठते खोर। महिसँग रच्यो विरञ्चि जनु सकल वज्र तनतोर॥ सकल वज्रतन तोरि मोरि मुरि गये दशानन। बाणासुरसे सुभट भये भञ्जित कहु जानन॥ जान न कोउ याको मरम शिवहि छाँड़ि को तानिये। निजबल हृदय विचारिकै हरगिरिते गरु जानिये॥ ७१॥

नृपसमाज प्रण कहत हौं रेखा वचन खँचाय। रङ्ग राज शिरताज सोइ ले है धनुष उठाय॥ लेहै धनुष उठाय जगत-मेह कीरति होई। जयमाला उर डारि जानकी व्याहै सोई॥ सोइ धनु धरि बल समुझि निज सुखमैं कारिख नहिं लहौं। बीर धीर धनु सो गहै नृपसमाजमैं प्रण कहौं॥ ७२॥

नहिं छीवै कर धनुष ये सबको कहौं बुझाय। जिन भूप-न रण मण्डिके रिपुबल देखि भगाय॥ रिपुबल देखि भगाय

गाय द्विज सन्त न मानहि। परतिय परधन हेत देत शठ हठ-बश प्राणहि॥ प्राणहि देत समर्पिकै ममताबश पातक बये। कारिख लागहि मुखनमें नहिं छीवै कर धनुष यै॥ ७३॥

ऐसे नृप धनुका धरें सुनहु सकल महिपाल। प्रजादण्ड परचण्ड अघ दान न कवनेहुं काल॥ दान न कवनेहुं काल देव गुरु पितृ न मानहिं। श्रीमदते मदअन्ध वेदको पन्थ न जानहिं॥ जानहिं मातु न पितु धरम कर्म वचन पातक करैं। कारिख कुलहि लगावहीं ऐसे नृप धनुका धरैं॥ ७४॥

ऐसे नृप धनु ना गहौ मानहु बचन प्रतीति। पर घेरहि लावहिं अनल राखहिं नहीं सभीति॥ राखहिं नहीं सभीत भीत मन्त्री हित तोरै। पातक बाँधै सेतु पुण्यसरि सर वृति ओरैं॥ मान मर्दि द्विज धन हरै तिय बालक बध कुल दहौ। कहौं पुकारि पसारि कर ऐसे नृप धनु ना गहौ॥ ७५॥

समुझि भूप धनुषहि धरौ निजकुलबलदल देखि। मातु और पितु और है धर्महि तजे विशेखि॥ धर्महि तजे विशेषि शूरको लोक न जाको। शत्रु समर बलवन्त तेग लोचण नहिं बाँको॥ बाँको कीरति चन्द्रसी जगत उजेरो नहिं करौ। भाट कहत प्रण खाँचिकै समुझि भूप धनुषहि धरौ॥ ७६॥

धनुष आँगुरी जनि छुयो बल कुल आपु निहारि। सत्य सुकृत त्यागे हृदय कहत असत्य विचारि॥ कहत असत्य विचारि नारिबध ब्राह्मण कीन्हौ। आगतको सङ्कल्प ऐंचि द्विज मुखते लीन्हौ॥ द्विजमुख दरशन करि भरयो दानि-शिरोमणि यश लियो। बदन रदन मसि लागि है धनुष आँगुरी जनि छुयो॥ ७७॥

शेष समान नरेश सो धरै भूमिको भार। जाको भानु

समानको तेज प्रताप अपार॥ तेज प्रताप अपार चन्द्र सम कीरति भारी। पावक सम बुद्धिवन्त पवनतें बल अधिकारी॥ बल अधिकारी पवनसो बुद्धि प्रकाश गणेशको। सो धनु कुवें महेशको शेष सुमान नरेश सो॥ ७८॥

यहि प्रकारके रूप धर शिवपिनाक परचण्ड॥ जाके बल प्रतापकी ध्वजा दीपनवखण्ड॥ ध्वजा दीप नव खण्ड भूप हरि चन्द्रसो होई। पृथु रघुवान दिलीप सगर अंशुमान सो कोई॥ क्षय यातिं सुनाभिसे शिविदधीच रूप उचरै। बार बार प्रण उचरौं यहि प्रकारके धनु धरैं॥ ७९॥

कौनारायण धनु धरैं जाको प्रबल प्रताप। धरयो मेरु मन्दर मही मथेउ सिन्धु करि दाप॥ मथे सिन्धु करि दाप प्रबलहिरण्याक्षहि मारयो। सुरमधुकैटभ बधन सुयश जगमैं विस्तारयो॥ विविध भांतिवसुधा सकल छलसो प्रतिपालन करैं। दुखो होय रूपरूप धरि सो नारायण धनु धरैं॥ ८०॥

विधि समान पर चण्ड सो आयोहोय समाज। ज्यहि जनको रचना करि सरिसर गिरि गजराज॥ सरि सर गिरिगजराज सकुल सातहु जिन बांधे। ऊंच नीच जग सृष्टि प्रबल बलते ज्यहि साधे॥ साधि वेद चारौ सुखनि रचो सकल ब्रह्माण्डसो। यह कोदण्ड सोई धरै विधि समान परचण्डसो॥ ८१॥

कीपुनि शङ्कर धनु धरै ज्यहि विष कीनो पान। त्रिपुर दनुज दाहन जगत हतो एकहीबान॥ हतो एकही बान अङ्गन तन रिसमैं मारयो। चन्द्र गगन शिर धरै शूल सूरज ज्योति मारयो॥ मारयो दुख सब जगतको जगत सबै पलमैं हरैं। आयोनी रूप रूप धरि कीपुनि शङ्कर धनु धरैं॥ ८२॥

गणनायक सो होय जो सो धनु धरै प्रमान। जाको पूजै प्रथम सुर विघ्न हरणकीबान॥ विघ्न हरणकीबान ध्यान हरि

हर बिधि साध। ज्यहि सुमिरणते सिद्ध सिद्धि योगहि अवराधैं॥ अवराधैं गिरिजा सुवन फल पावहि सुखजोहि जो। सोपिनाक यह कर धरै गणनाथकसो होयजो॥ ८३॥

शशि सूरज दिगपाल सब सुर सुरपति महिपाल। यक्ष सर्प गन्धर्व मनु मनुज दनुज यमकाल॥ मनुज दनुज यम काल पिष्ट मुनि सिद्ध समाजे। गिरि समुद्र वसु मरुत जहां लगि सकल विराजे॥ सकल विराजैं सब सुनत ज्यहि बलहोय सो उठहु अब। धरि धनु प्रण पूरो करौ शशि सूरज दिग्पाल सब॥ ८४॥

बैठकते उठि उठि सजे सुनत भाटकेबैन। अभिमानी मानीमहिप कियो हिये अतिचैन॥ कियोहिये अतिचैन देवबल दृष्ट सभारयो। कटिपट दृढ़ करि दण्ड भुजनि को जोर प्रचारयो॥ जोर प्रचारि निहारि भट अरुण नयन आलस तजे। कहां धनुष तृण प्रणकहां बैठकते उठि उठि सजे॥ ८५॥

धनु न नयो बर कटि नयो तमकि छुये धनु आनि। पांव न-वै शीशहु नवै भई प्रबल बलहानि॥ भई प्रबल बल हानि मान मुख कोसब सूख्यो। तनमैंचल्यो प्रस्वेद अधर दल विद्रुम छूट्यो॥ छूट्यो विद्रुम वदनभो देह दशानिद्रल भयो। लोचन मन दूनो नये धनु न नयो कर कटि नयो॥ ८६॥

एकतजैं एकै धरैं करैं अनेक उपाय। बैठे ठाढ़े मध्य धरि धनुक हुँचाउनखाय॥ धनुक हुँचाउनखाय बिरध बन्दीगण बोलैं। बैठहिं शीश नवाय नयनपलकै नहिं खोलैं॥ नयन करेयेभाट कहि मातु जनेकहुंतरु तरे। कोदो कणै अहारकै एकतजै एकैधरे॥ ८७॥

धनु धनसबको हरि लयो मति गति नामसदाप। यश कीरति बल बीरता धीरज तेज प्रताप॥ धीरज तेज प्रताप नियम

व्रत धर्म सुकर्मनि। अस्त्र शस्त्रकोहारि रूप द्युति लाज काज गनि॥ लाज काज परगाज धरि राजनि धनु कर सो छियो। रीते बीते सब भये धनु धन सबको हरि लियो॥ ८८॥

गाजि गाजि धनुकर धरयो लाजि लाजिगेभाजि। साजिसाजि बल दल सबै राजा राज समाजि॥ राजा राज समाज भये सुख गोवन लायक। सम्पति सबै गँवाय करयो शङ्कर धनुधायक॥ धायक आसन परगये जनुतनबल धनु छलि हरयो। लाजि लाजि बैठे सकल गाजि गाजि कर धनु धरयो॥ ८९॥

धनु सुमेरते गरु भयो उठै न कोटि उपाय। तिल न टरै भूपति लरैं धरैं अरैं लपटाँय॥ धरै अरै लपटाँय जायँगड़ि अधिक धरामैं। जब्यो शेषके शीश ईश जनु चढ़यो कलामैं॥ कलारूप कैलासको धरणि रूप धनुको लयो। उदय अस्त-गिरि भार धर धनु सुमेरते गरु भयो॥ ९०॥

क्रोध बचन बोले जनक नृप बल पौरुष देखि। प्रण प्रमाण देखन सबै आये भूप विशेखि॥ आये भूप विशेखि मनुज सुर असुर सभामैं। तिल भरि सकैं न टारि शंभु धनु धरयो धरामैं॥ धरा नछूटी धनुमते बल न करयो भूपति तनक। बीर धीर धरणी नहीं क्रोध बचन बोले जनक॥ ९१॥

प्रण हमार मिथ्याभयो जाहु सकल नृप धाम। बिधि नर च्यो वै देहि वरु पुरुष न कोऊ बाम॥ पुरुष न कोऊजान तो तो प्रण यह धरतो कहा। कन्या रही कुमारी यह भई हास्य जगमैंमहा॥ हास्य भई बसुधा सकल शूरहीन सब जगठयो। जनक सभामैं कह वचन प्रण हमार मिथ्या भयो॥ ९२॥

लषण लालको लालमुख सुने जनकके बैन। फरके अधर प्रलापको अरुण भये द्वउनैन॥ अरुण भये द्वउ नयन जोरि

करमे उठि ठाढ़े। करुणा निधिकी ओर वचन बोले रिस बाढ़े॥ बाढ़े रिस कह सुनु जनक वचन कहौ रघुवंश कुल। राम कृपालु समाजमहँ लखन लाल कह लाल मुख। ९३॥

कहाधनुष जीरण धरौं यह पुरुषारथ कौन। प्रभु आयसु पावौं तनक धरौं चौदहौभौन॥ धरौं चौदहौभौन मही घट चट पट फोरौं। मन्दरमेरु उपारिसमुद वसुधा सब बोरौं॥ वसुधा बोरौं समुद्रमें समुद्रसातलमें भरौं। शेषशेष धरि सहिकरनि कहा धनुष जीरण धरौं॥ ९४॥

सहिस उठाउँ धनुष यह जो प्रभु आयसु होय। दिग्गज चारि यकत्र करिसहीवरन पुनिसोय॥ सहीवरनपुनि खैंचिलोक चौदहधरि आनौं। हिमगिरि अरु कैलास धनुष ऊपर धरितानौं॥ तानौं सकल समाज रूप चढ़ि चढ़िडारहुँभार कह। धाय सहस योजनमही सहित उठावौं धनुष यह॥ ९५॥

जनक हिये सकुचे सहमिडरे सकल महिपाल। दिग्गज धरयल कुटिगो भयते दिखि यमकाल॥ भयते दिखि यम काल जानकी हिय हर्षानी। गुरु रघुपति मन तोष कही सुन्दर मृदु बानी॥ महिकंपतिप्रण लखके सूरजके मन सुख भयो। सभा सशंक प्रमाण सुनि जनक शोच सकुच्यो नयो॥ ९६॥

कौशिक मुनि आयसुदयो सुनहु राम रघुवीर। धनुष उठावहु बाम कर हरहु जनककी पीर॥ हरहु जनककी पीर सभाको शोच निवारो। सुर सज्जन सुख लहहिं दुष्ट मुखकीजिय कारो॥ कारो मुख महिपाल सब ज्यहि धनु निज करसों छियो। सोधनु करौ मृणाल इव कौशिक मुनि आयसुदियो॥ ९७॥

करि प्रणाम रघुवंश मणि उठे यथा मृगराज। आय-सु माँगि जोरि कर सुमना छवि शिरताज॥ सुमना छवि शिरताज मंचते चले गोसाईं। पुर जन पुण्यसँभारि सँभारि देव दुन्दुभि बजाई॥ दुन्दुभि बाजीं अति घनी बन्दीजन धन्य धन्य भनि। मध्य वेदिका पर गये करि प्रणाम रघुवंशमणि॥ ९८॥

पटकत धनु लक्षण लख्यो जान्यो प्रभु मन बात। कह्यो करणि धारी सबै सजगहूजिये गात॥ सजगहूजिये गात धनुष कौधकादरेरो। जो महि चलौतो सृष्टि विकलता सबको हेरो॥ हेरोमैं रघुवंशमणि लेत धनुष मनमैं लखो। लटकत मही संभारियो पटकत धनु लक्षण लख्यो॥ ९९॥

वाम अंगूठा पांयदवि वाम हाथ गहलीन। दमक दामिनी ज्यों करै सबके नयन मलीन॥ सबके नयन मलीन खैंचि कीनो नभनाईं। शब्द रह्यो ब्रह्मांड खण्ड द्वै भयो गोसांईं॥ धर्यो गोसांईं शंभु धनु शब्द सुने योगी जगे। खण्ड खण्ड धनु तन भयो वाम अंगूठारे लगे॥ १००॥

शिव शिव वृषभ पुकारई धनुष शब्द सुनि घोर। दिग्गज दिग्पालन भयो हृदय कम्प अति जोर॥ हृदय कम्प अति जोर कम्प कैलास ईशथल। शिव शिर सुर सरि धार उछलि आकाश गयो जल॥ गयो सुजल आकाश-थल उमा गणेश विचारई। कहा भयो कैसो भयो शिव शिव वृषभ पुकारई॥ १०१॥

जय जय जय रघुवंश मणि सुर फूलन बर्षाय। वेद विप्र वन्दी विरद नारी मङ्गल गाय॥ नारी मङ्गल गाय सिया जयमाल उठाई। शोभित प्रभु उर मध्य विश्व कीरति

जनुछाई॥ कीरति गावहिं सिद्ध मुनि बल प्रताप छवि रूप अनि। सतानन्द आनन्द कह जय जय जय रघुवंश मनि॥ १०२॥

नृपगण भये मलीन सब सन्त भये आनन्द। जनक शोच संकट गयो सिया मातु सुख वृन्द॥ सिया मातु सुख वृन्द निछावरि मणिगणदेहीं। रामसियाछवि देखि प्रेम बशकीन न केहीं॥ कीन न केहीं दान सब समय शंभु धनु टूट जब। तुलसिदास संकट गये नृप मन भये मलीन सब॥ १०३॥

महा मोद मिथिला पुरी राम कियो धनुभङ्ग। खल मलीन सज्जन सुखद सुरसु सुमन शुभरङ्ग॥ सुरसु सुमन शुभरङ्ग कपट भूपति मन माखे। लक्ष्मण उठे सक्रोध राम भारत बचि राखे॥ बचि राखे रघुवीर नृपतिय प्रकटीं जुहुतींदुरी। राम सिया जोरी निरखि महा मोद मिथिला-पुरी॥ १०४॥

कर कुठार परशु रामके आये सुनि धनु भङ्ग। गौर रूप अनुरूप शिवजटा भस्म संवंग॥ जटा भस्म संवंग देखि सकुचे सब राजा। लागे करन प्रणाम काल निज समुझि समाजा॥ समुझि समाज पिनाक लखि कहे वचन अरि कामके। क्यहिं तोरयो बोल्यो तुरत कर कुठार परशु रामके॥ १०५॥

तोरयो धनु रघु बंश मणि जाको प्रबल प्रताप। हानि कहा भय रावरी कहिय प्रकट करि आप॥ कहिय प्रकट करि आप देव द्विजवरकी नाई। पूजिय मानीय तुम्हें आपनी वृद्ध बड़ाई॥ वृद्धबड़ाई तवहिं जगगाय विप्र पद पूजि अणि। देहु आशिषाप्रेमसों धनु तोरयो रघुबंश मणि॥ १०६॥

काल वश्य बोलत कहा गुरुको धनुष विहंड। बिप्रन ऐसोबोल सुनु नृप कुल शिरको खंड॥ नृप कुल शिरको खंड परशु करती तीक्ष्ण धारा। धनु ज्यहितोरयो आजुतासु भुजकाटन वारा॥ काटनवारा परशु यह ज्यहि काटे भूपति महा। त्यहि समेत रामहिं हतौं काल वश्य बोलत कहा॥ १०७॥

भूपति मिले नखेतमें तुम्हैं बिप्र कुल देव। हते तुम्हारे हति गयेते द्विज पद बिन सेव॥ ते द्विज पद बिन सेव क्षत्र धर्म्म नते हीने। ते तुम काटे परशु क्रूर कपटी जड़ दीने॥ जड़ दीने नृप तुम हते पाप राशि नहिं चेतमें। ताते बाढ़े भवनमें भूपति मिले नखेतमें॥ १०८॥

क्षत्र विहीनी महिकरी परशु वार इकबीस। सो न विदित त्यहि बाल जड़ तुरत जाइहै खीस॥ तुरत जाइहै खीस बचन मुख बोलु सँभारे। गुरु गुनही ओ मौन ताहि तू पीछे डारे॥ पाछे बचहुन कालकेबालक लखि करि वर टरी। परशु धार ज्यहि काटिहौं क्षत्र बिहीनी महिकरी॥ १०९॥

द्विज कुल के नाते डरौं सुनहु विप्र सत भाव। नत क्षत्री कुलको सकल लेहुँ तुरत अबदाव॥ लेहुँ तुरत अबदाव परशु धनु भूमि गिराऊँ। धर्मबड़ो रखवार मारि द्विजपातक पाऊँ॥ पातक पाऊँ शीशपर दूजे रघुपति कर डरौं। यमघर तुमहिं बसावतो द्विजकुल केनाते डरौं॥ ११०॥

लै कुठार सन्मुख धरयो राम लषणकी ओर। कौशिक बर जो बालकहि मोहिं नहीं अबखोर॥ मोहिं नहीं अब खोरि करौं अब काल हवाले। परशु बन्यो स्वइ हाथ

विपुल भूपति घर घाले॥ घर घाले शिर मालिका शंकरको पूजन करयो। अब चाहत तव शिर हरयो लैकुठार सन्मुख धरयो॥ १११॥

राम कही कर जोरिके भृगु कुल कमल दिनेश। बालक दीन विचारि उर क्रोध न कीजिय लेश॥ क्रोध नकीजिय लेश बाल अपराध विहीनो। धनुकर समते टूट चूकसों महीं अधीनो॥ महीं अधीनो कर्म वश बांधिय कीजिय छोरिके। दास विचारि प्रभाव मोहि राम कही कर जोरिके॥ ११२॥

शंभु दण्ड खण्डित करयो सो भुज खण्ड हुँआज। जो कर परशु प्रचण्ड लखि कटे अवनिके राज। कटे अवनिके राज बचहु नहिं दीन उपायन। क्षत्रवंशतनपाय बचन मुख मृदुल सुभायन॥ मृदुल सुभायन कोंबचौधनु तोरत नहिं तब डरयो। अनुज सहित भुजकाटिहौं शंभु दण्ड खण्डित करयो॥ ११३॥

क्षत्र बंश द्विज मानिये लषण कहो हँसि बात। हमपै पापन होय द्विज जननी कीन्हो घात॥ जननी कीन्हो घात ताहिते मन अति बाढ़ो। बड़ बैरी रण हत्योबिरद पायो शिर गाढ़ो॥ गाढ़ो पाय पाप शिर तासों रिसनहिं ठानिये। तुम्हैं मारिको अघल है क्षत्र बंश द्विज मानिये॥ ११४॥

रे कुठार कुण्ठित भयो गयो स्वभाव सक्रोध। अरि प्रचण्ड दहि अवनि नृप कीन्हो हृदय प्रबोध॥ कीन्हो हृदय प्रबोध अछत अरि देखत ठाढ़े। उत्तर सुनत सरोष मीर हृदि ज्वालन बाढ़े॥ ज्वाल न बाढ़े जरत उर घोर धारको लै गयो। काटि काटि कण्ठनिकु तब रे कुठार कुण्ठित भयो॥ ११५॥

जो रघुपति आयसु करैं तौ द्विज देहुँ देखाय। रण-मण्डलकी कठिनता तुमको देउँ बताय॥ तुमको देउँ बताय परसु धन लख्यो तुम्हारो। भूमिशेष मैं पार भारि बारन उर फारो॥ बारन उर फारो सनुक्षि विप्रघात पातक परैं। सभा समेत विचारिये जो रघुपति आयसु करैं॥ ११६॥

लखण वचन कहि धनु लियो नयन सयन करि राम। बरजे दुस बालक निपट भृगुपति सब गुणधाम॥ भृगुपति सब गुण धाम ताहिसों समसरि कीजे। जाको पदरज सेव्य आपने शिर धरि लीजे॥ शिर धरि लीजे रिस कृपा अनुज शिखावन प्रभु दयो। सुखसुख राम निहारि नत लखण वचन कहि धनु लियो॥ ११७॥

अस समर्थ भृगुवंशमणि सुररक्षक द्विजपाल। महि-मण्डल इकईस गनि करी निचल विशाल॥ करी निचल महो सकल दई विप्रके हाथ। रुधिरकुण्ड तर्पण कियो तेई भृगुकुलनाथ॥ तेई भृगुकुलनायके चरण शरण सेवहु सुमति। अभय होय तिहुँ लोकमहँ अस समर्थ भृगुवंश-पति॥ ११८॥

जाके पदरजके धरे सुद मङ्गल कल्याण। अभयकरन सङ्कटहरन गावतवेद पुराण। गावत वेद पुराण कल्पतरु सम सुखदाता। हरिहर पूजत जाहि पर्म सुखदानि विधाता॥ दानि विधाता जानिके निशि दिन सेवन जे करैं। अर्थ धर्म कामादिकी पद रज सुख जाके धरैं॥ ११९॥

काल व्यालता सो डरत जाके इन पद प्रेम। यहै क्रिया यह योग है यहै योग जप नेम॥ यहै योग जप नेम कपट तजि मन वच कायक। सोइ सुकती सोइ शूर जाहि द्विज भक्ति अमायक॥ मायक छल तजि पूजि पद तन मन

धन सेवा करत। जीव जाल दुखमाल सब काल व्याल कासों डरत॥ १२०॥

सो त्रिलोक पावन परम जिनके द्विज पद प्रीति। विश्रम अमलाको नहीं दिशा विदिशि सब जीति॥ दिशा विदिशि सब जीति मोह रिपु कटक भगावै। यशदायक गुण ग्राम राम अनुजहि समुझावै॥ राम बुझावै अनुजको चलबंश याही धरम। पदरज नित हित शिर धरैं सो त्रिलोक पावन परम॥ १२१॥

राम सिखावन दुहुँ सुन्यो लखन और भृगुबंश। मति गति सुरति सँभारि उर ब्रह्म सच्चिदानन्द॥ ब्रह्म सच्चिदानन्द भयो नृप सुत अवतारी। शारँग करमें दियो विविध विनती अनुसारी॥ विविध भांति पातक लगै कटुक वचन मनमें गुन्यो। परशुधरन पुनि लखन हू राम सिखावन दुहुँ सुन्यो॥ १२२॥

नृप सभीत उठि उठि चले परशुराम गति देखि। आशिष भृगुपति देय करि आनँद लह्यो विशेखि॥ आनँद लह्यो विशेषि जनकपुरजन सब रानी। बंदी मागध सूत उच्चरहिं मङ्गल बानी॥ मङ्गल बानी पुर भई बाजि उठे दुन्दुभि भले। सन्त सुधा सुरगण मुदित नृप सभीत उठि उठि चले॥ १२३॥

समय पाय कौशिक कहेउ जनक महीप बुलाय। सजहु सकल मङ्गल सुभग दशरथ नृपति बुलाय॥ दशरथ नृपति बुलाय ब्याह कुलरीति सँभारो। माड़हु रचहु विचित्र नगर गृह गली सँवारो॥ गली सँवारहु अगर मय सब कुतर्क संशय दहेउ चार पठाइउ अवधपुर समय पाय कौशिक कहेउ॥ १२४॥

सतानन्द अवधहि चले लग्नपत्रिका हाथ। ढोर नीरयुत मणि पदिक सकल सुमङ्गल साथ॥ सकल सुमङ्गल साथ देखि रघुपति पुर पावन। भूपति लियो हँकारि दीन्ह पत्रिका सुहावन॥ दीन्ह पत्रिका नृप लखी राम ब्याह-मङ्गल भले। गृह गृह बजे बधाव पुर सतानन्द अवधहि चले॥ १२५॥

रामजानकी ब्याह सुनि साजी भूप बरात। रथ तुरङ्ग मातङ्ग घनगजघण्टा घहरात॥ गजघण्टा घहरात दुन्दुभी धुनि चहुँओरन। मङ्गल भरि भरि थार भामिनी गान ककोरन॥ गान ककोर प्रमोद पुर सुरतिय जय जय सुमन धुनि। दशरथहीं सुरपति सज्यो रामजानकीब्याह सुनि॥ १२६॥

कुल विचार व्यवहार करि गुरुआयसु नृप पाय। मिथिला पुरको मग लियो भूप निशान बजाय॥ भूप निशान बजाय सगुण सुन्दर शुभ पाये। बीच बास करि बिबिध जनकपुर भूपति आये॥ भूपति आये जनकपुर अति उछाह आनन्द भरि। दुहुँ समाज संगम सुभग कुल विचार व्योहार करि॥ १२७॥

उमा रमा ब्रह्मायणी पतिन सहित पुर आय। राम जानकी रूपछवि देखनको ललचाय॥ देखनको ललचाय निरखि दशरथके बारे। मनवचक्रमवशप्रेम भये सब देखन-हारे॥ देखनहारे भे मगन ऋधिसिधि मङ्गलदायनी। सिय बिवाहकृतकर्म सर्व्व उमा रमा ब्रह्मायनी॥ १२८॥

सुथल भूप डेरा दियो कौशिक लक्ष्मण राम। पाय खबरि पितु आगमन चले हर्षि गुणधाम॥ चले हर्षि गुण-धाम मुदित भेटे रघुराई। मुनिपदरज धरि भूप भरत भेटे दोउभाई॥ भेटे पुरजन गुरुद्विजन राम देखि पूरण हियो।

ऋधिसिधि सब मङ्गल लिये सुथलभूप डेरा दियो॥ १२९॥

सखि नृप सँग द्वै और सुत गौर सुभग सुठि श्याम। लषण अनुहरते एक हैं एक सत्य जनु राम॥ एक सत्य जनु राम कहैं जे नयन निहारे। वैसहि वदन मयंक नयन वैसहि रतनारे॥ वैसहि लक्ष्मण राम छवि तैसे बल छवि देह दुत। नाम भरत रिपुहन कहत सखि नृपसँग द्वै और सुत॥ १३०॥

सखि विदेह समुझैं हिये तीनि रूप मैं कौन। चारहु कुवँर बिवाहिये यहि पुर रूप परवीन॥ यहि पुर नृप परवीन दीन विधि चारि सगाई। जस कन्या तस कुवँर योग शिव दीन मिलाई॥ दीन मिलाय महेश विधि बड़ो योग यपतप किये। तौ सब पुर सुकृती समुझि सखि विदेह समुझैं हिये॥ १३१॥

चारि कुवँर तिरहुति चलैं पाय सुभग ससुरारि। कहुँ दिन दश कहुँ मास भरि देखि तृप्त नरनारि॥ देखि तृप्त नरनारि जाहि पुनि दुलहिनि चारौ। कछु दिन वै उत रहैं जनक बोलि हैं कुमारी॥ जनक कुमारी आय हैं अवध छांड़ि अपने थलै। बनि बनि दिन दश वीसमैं चारि कुवँर तिरहुति चलैं॥ १३२॥

ये बातैं बड़ि पुण्यते सखि पुरवैं त्रिपुरारि। तौ विरञ्चि हमहीं रच्यो सुकृत टूट दिन चारि॥ सुकृत टूट दिन चारि चारि रूप कुवँर बिवाहौ। माड़व तरे निहारि लेहु जग जीवन लाहौ॥ जीवनलाहौकी अवधि यह सुख देखहिं धन्य ते। विधि रुख रूप उर जो बसै ये बातैं बड़ि पुण्यते॥ १३३॥

सखि सुकृती ताहौ गनै रामलषण छवि देखि। ताते पुर सुकृती बड़ो आये कुवँर विशेखि॥ आये कुवँर विशेखि नारिनर भे सुख भारे। दर्शनफल तत्काल भूप दशरथहि निहारे॥ दशरथ राम निहारि कै दूलह दुलहिनी पुनि बनै।

यह विवाह देखहि सुनहि सखि सुकृती ताही गने ॥ १३४ ॥

व्याह घरी विधि लिखि दई वर्षि सुमन सुर गाय। राम विवाह उछाह बड़ देखन चले बजाय॥ देखन चले बजाय सतानँद जनक बुलाये। दशरथ सहित बरात जनकमन्दिर चलि आये॥ मन्दिर चलि आये सबै पाँउड़ परि जय जय भई। करि उत्साह समाज शुभ व्याहघरी विधि लिखि दई॥ १३५ ॥

को वितान सुखमा कहै जिहि थल सुखमा आहि। नटत किंकरी लक्ष्मी रुख जुगवत पल जाहि॥ रुख जुगवत पल जाहि जहाँ दुलहिनि वैदेही। विधि हरिहर यम इन्द्र होत चितवैं हित तेही॥ चितवैं हित तेही कृपा दूलह औरघुपति रहैं। समधी दशरथ जनक सम को वितान सुखमा कहैं॥ १३६ ॥

इन्द्र ब्रह्म दूनो मिले बन्दी वर्णत भाय। सब समाज सब साज सो हमैं प्रत्यक्ष दिखाय॥ हमैं प्रत्यक्ष दिखाय यहै उपमा जिय आवै। नारि सहित सुकुमारि राम व्याहन सुख गावै॥ रामव्याहसुख देखही अमरावति संयुत चले। निज निज पुर सुरगण सहित इन्द्र ब्रह्म दूनो मिले॥ १३७ ॥

राम सुभूषित जगमगे माड़व मध्य समाज। माथे मुक्ता मौरछवि नखत सहित निशिराज॥ नखत सहित निशिराज नारिनर देखत शोभा। रघुपतिमुख शशिशरद निरखि छवि तृप्त न को भा॥ रघुपति मुखछवि शरदशशि नयन-चकोरनि लखि लगे। मदन कोटि शत वारिये राम सुभूषित जगमगे॥ १३८ ॥

मुनि वशिष्ठ अरु सतानँद भरद्वाज जाबालि। अत्रि अगस्ति सुगर्ग ऋषि कश्यप मुनि तपशालि॥ कश्यपमुनि तपशालि देव

ऋषि सनक समेते। लोमश अरु चिरजीव व्यास पाराशर जेते॥ पाराशर कौशिक सहित गौतम शुक उच्चरत पद। वेदमन्त्र करणी करैं मुनि वशिष्ठ ऋषि सतानँद॥ १३९॥

सूरजकुलगति सब कहैं पावक आहुति लेय। गणपति कर पूजा करैं विधि विवाह कहि देय॥ विधि विवाह कहि देय पवन पुनि शेष महेशा। सुरपति सुरगण सहित मगन ढिग लखत रमेशा॥ लखत रमेश सुदेश छवि राम सबहि जानत रहैं। विप्रवेष बेदन पढ़ैं सूरज कुलगति सब कहैं॥ १४०

जनक मगन रानी सबै मुनि बशिष्ठ कहि दीन। सतानंद आनी सिया भूषण सजत नवीन॥ भूषण सजत नवीन राम ढिग अस्थित कीन्ही। मुनिवर अवसर समुझि शान्ति श्रुति मग कहि दीन्ही॥ दीन्ही दुन्दुभि अतिघनी सिय मण्डप आई जबै। दशरथ सभा समेत सुख जनक मगन रानी सबै॥ १४१॥

जनक पायँ पूजन लगे शाखोच्चार उचारि। रानी नृप मन मोद भरि लेको परशु चिवारि॥ लेको परशु चिवारि नारि वरमङ्गल गाई। कन्यादान विचारि देव फूलन करि लाई॥ फूले तरु नृप सुकृतके चरण प्रचालत सुख जगे। निरखि बदन दम्पति मगन जनक पायँ पूजन लगे॥ १४२॥

जे पदपङ्कज रूप धरे जे शिवमान सहंस। जे पदपङ्कज मृदुल रस मुनि संकुल अलिवंस॥ मुनि संकुल अलि बंश प्रकट कीन्ही जिन गङ्गा। वरणत वेद पुराण प्रणतहित विरद अभङ्गा॥ विरद अभङ्ग प्रसङ्ग श्रुति मुनि नियके पातक हरे। अज सनकादिक ते भजैं जे पद पङ्कज नृप धरे॥ १४३॥

जनकराव समको सुकृत कहत देव अनमाहिं। निरखि अगन कौतुक परम जय जय कहहिं सिहाहिं॥ जय जय कहहिं सिहाहिं वचन कहि चार सँवारे। नरनारिन लखि रूप नेहवश देह बिसारे॥ देह बिसारे रूपको ब्याहलाह लोयन लकत। कोशलेश मिथिलानगर जनकराय समको सुकृत॥ १४४॥

होन लगीं वर भाँवरी दुलहिनि ललित ललाम। दूलह सुन्दर साँवरो शशि मुखपङ्कज राम॥ शशिमुख पङ्कज रामवाम लखि मङ्गल गावहिं। मुनिगण भाँवरिकृत्त करहिं गनि जियनि बतावहिं॥ अगन मोद भाँवरि परै रानी तन मन वावरी। सब कुलचार विचार करि होन लगीं वर भाँवरी॥ १४५॥

राम निछावरि को गनै मुक्ता मणि गण खान। मखछप धन पूरो भयो जनु जुवारि यव धान॥ जनु जुवारि जव धान जनकमन्दिरते आवैं। मुनि वशिष्ठके वचन नेग गहि ताहि दिवावैं॥ नेग साधि आहुति दई ब्याह भयो सब कोउ भनै। देव भूप रानी जनक राम निछावरि को गनै॥ १४६॥

जेहि विधि रामविवाह भो सो कहि सकहिं न शेष। सम्पति शोभा सुख सुभग मङ्गल मोद सुवेष॥ मङ्गल मोद सुवेष साजु शुभ सकल समाजैं। कहि कहि थके गणेश व्यास जिन श्रुति पथ साजैं॥ श्रुतिपथ साजैं ते चकित मोद विनोद उछाह भो॥ तुलसिदास सो किमि कहै जेहि विधि रामविवाह भो १४७॥

जनक कौन जो मुनि कहेउ सब कन्यका विवाह। भरत शत्रुसूदन लषण दूलह करे उछाह॥ दूलह करे उछाह नृपति दशरथ सुख पायो। रामव्याह विधि शोधि मुनिन देवनि करवायो॥ देवनि करवायो सुकृति दूलह दुलही

सुख लह्यो। जोरि चारि निहारि सुख जनक कीन जो सुनि कह्यो ॥ १४८ ॥

मघा मेघ दशरथ भये याचक दादुर मोर। सर सरिता द्विजगण भये बाढ़ि चले चहुँ ओर॥ बाढ़ि चले चहुँ ओर शालि जनकादिक रानी। पुर परिजन भे कृषी सुखी सुख सुन्दर पानी॥ सुन्दर पानी बुंद मणि भूषण पट वर्षत नये। राम सिया पावस सुखद मघा मेघ दशरथ भये १४९ ॥

वर कन्या राउल चले मुनि आयसु अस दीन। भूप समाज समेत सब जनवासे पग दीन॥ जनवासे पग दीन बजे दुन्दुभि अति भारी। दुलहिन दूलह ल्याय भवन आसन दैनारी॥ दूलह दुलहिनि सम निरखि रानी सुख सानी भले। रहसविवश लहकौर कृत बरकन्या राउल चले॥ १५० ॥

रमा उमा गावन लगीं लै मातृनको नाम। धरि कपोल लह कौरकृत करनि खवावत राम॥ करनि खवावत राम कुलाहल मङ्गल होई। नेक अनेक प्रकार सकुचकहँ प्रकटत दोई॥ प्रकटत तिय वचननि कहैं रामसीय प्रेमनि पगीं। कहत कैकयी कौशिला रमा उमा गावन लगीं॥ १५१ ॥

सिय सूधी तुम चतुर हो रमा कह्यो मुसुकाय। मुनि-तियकी नांई कहँ कीजिय नहिं रघुराय॥ कीजिय नहिं रघुराय सीय सिख सुनहु हमारी। पद कबहूं जनि कुयो पवनिकी सुगतिनि नारी॥ नारी चारि बिवाहिये एक धनुष दलि गय लहो। रमा कहत रघनाथसों सिय सूधी तुम चतुर हो॥ १५२ ॥

हासविलासविनोदमय नेग योग करवाय। राम उठाये भवनते शिविका रुचिर चढ़ाय॥ शिविका रुचिर चढ़ाय

कुलहिनिन सहित सुहाये। दुन्दुभि देवन पुहुप राम जनवासे आये॥ जनवासे देखत मगन भूप दीन लखि द्विरद हय। पोषे याचक विविध सुख हासविलासविनोदमय॥ १५३॥

षटरस चारि प्रकारके भोजन विविध बनाय। सतानन्द आपुहि जनक दशरथ चले लिवाय॥ दशरथ चले लिवाय पाँवड़े अर्घ सुहाये। मणिसिंहासन रुचिर कुरस भोजन परुसाये॥ भोजन परुसाये मुदित तियगण गानविहारके। सुनि दशरथ भोजन कियो षटरस चारिप्रकारके॥ १५४॥

पान मान प्रमुदित दये भये विदा जनवास। गहगह बाजी दुन्दुभी मङ्गल मोद विलास॥ मङ्गल मोद विलास बरातिन मन्दिर भूले। जनक प्रीति रज सुदृढ़ रामछबि पावस झूले॥ झूले गज याचकन गृह पहिरि पाय मन्दिर गये। जान रायरघुपति सर्वाह पान मान प्रमुदित दये॥ १५५॥

तीनि मास दशरथ रहे नित नव आदर होय। विदा-साज साजी जनक सबको सुखरुख जोय॥ सबको सुख-रुख जोय सहस दश स्यंदन साजे। मुक्तामणि गणसुपट भाँड कञ्चनके राजे॥ मणिगण लागे अल जे ते ते रथपूरे लहे। जनकराज दायज सजे तीनि मास दशरथ रहे॥ १५६॥

दिग्गज सहसपचासलौ सजे जरकसी साज। मणि-मुक्ताकी झालरी झपे सोह गजराज॥ झपे सोह गजराज जरीजरकसी अमारी। तिमिर अरुण इकठौर मनौ पावस अँधियारी॥ पावस अँधियारी सघन घण्ट शब्द सुरबासलौ। जनक राय दायज सज्यो दिग्गज सहसपचासलौ॥ १५७॥

तुरी लाखदश बर सजे बरन बरनके जीन। रथतुरङ्गते अति भले चञ्चल सुभग नवीन॥ चञ्चल सुभग नवीन अलंकृत

भूषण राजे। बरन निदरि मनवेग रङ्ग रङ्गनि बनि साजे॥ बनिबनि साजे बाजिवर जिनहि देखि सुरहय लजे। जनकराय दायज सज्यो बुरी लाखदश वर सजे॥ १५८॥

वृषभवृन्द दशलाखलौ सुन्दर सब गुणधाम। श्रृङ्ग अङ्ग मण्डित पुरट सोहत ललित ललाम॥ सोहत ललित ललाम भये भोजन पकवाने। सौरभ मृगमद मलय अगर कुमकुमके थाने॥ अगर कुमकुमा रस भरे कपे जरकसी आँखलौ। जनकराय दायज सज्यो वृषभवृन्द दशलाखलौ॥ १५९॥

महिषी लाखसतानवे देश देशकी खानि। मनो श्याम-घनके सुवन महो चरैं सब आनि॥ महो चरैं सब आनि दूध धरनी धसि धारे। श्रृङ्ग कण्ठ मणिहार शिशुन प्यावत सुकुमारे॥ प्यावत सुकुमारे थननि दूध सुधार विधानवे। जनकराय दायज सज्यो महिषी लाखसतानवे॥ १६०॥

धेनु लाखयुगबानबे कामधेनुसी रूप। अलङ्कार मणि-गण वसन सोहत परम अनूप॥ सोहत परम अनूप दूध सूधो सुठि रूरी। संगशिशुनके वृन्द सकल शुभ लक्षण-पूरौं॥ पूरी छविको को कहै जेहि देख्यो सोइ जानबे। जनकराय दायज सज्यो धेनु लाखयुगबानबे॥ १६१॥

शिविका लाख बहत्तरी सियदासी असवार। मनहुँ काम-तिय रति चढ़ीं करि षोड़श श्रृङ्गार॥ करि षोड़श श्रृङ्गार जानकीपिय अधिकारी। मन गति रति परवीन चतुरविद्या छवि भारी॥ विद्या छवि सतभाव उर सिय सेवा उनमत्त रौ। दासी दायज रूप सज्यो शिविका लाख बहत्तरी॥ १६२॥

सवालाख पिञ्जर सज्यो कञ्चनखँचित विचित्र। शुक शारिका मराल बहु कुहीबाज शुचिमित्र॥ कुहीबाज शुचि-

मिल सिया रुचिके प्रतिपाले। ते सेवक सब लिये जानकी सेवनवाले॥ सेवनवाले भाग बड़ जगतजननि जेहि जग ह्यो। तासुसङ्ग यह कौन बड़ सवालाख पिञ्जर सज्यो॥ १६३॥

ऊट अजा अरु श्वानको लेखा गनो सिराय। जे प्रिय लियके रूप लख्यो नगर बाहरे जाय॥ नगर बाहरे जाय मनहुँ अमरावति घेरी। दुन्दुभि दये सहस्र छत्र अरु चमर घनेरी॥ चमर घनेरी भवन पट आसन विविध विधानको। दायज दियो नये गने ऊट अजा अरु श्वानको॥ १६४।

रानिन सुता सँवारिकै करुणा सीख सुनाय। पति-व्रतधर्महि दृढ़ धरेहु सेयहु सहज सुभाय॥ सेयहु सहज सुभाय होहु नित स्वामिहि प्यारी। सदा सुहागिनि होहु यहै आशीष हमारी॥ यहै आशीषा देहि इन सुता अङ्क उर धारिके। भेंटि भेंटि पांयन परैं रानी सुता सँवारिकै॥ १६५॥

जनकनयन धारा बहै सुता लिये उर लाय। लिय कण्ठा छोड़त नहीं जनक न त्यागी जाय॥ जनक न त्यागी जाय सचिव समुझावत राजै। धीरज धर्मपरान ज्ञान गुण ध्यान समाजै॥ ध्यानसमाज न लाज रह छूटत लगत रोवत गहै। मातु गरे पुनि पितु गरे जनक नयन धारा बहै॥ १६६॥

बिदा हेत रघुवर गये जनकरायके धाम। रानिन लखि आसन दियो कीन्हे राम प्रणाम॥ कीन्हे राम प्रणाम कहत मृदु वचन सुहाये। बिदा दिजीये मातु नृपति चह अवध सिधाये॥ अवध सिधाये सुनत नृप रानी मुख सूखत भये। बचन न मुखपङ्कज कढ़्यो बिदा हेतु रघुवर गये॥ १६७

रानी रघुवर पाँय धरि कहत वचन भरि नयन। तुम्हैं कहत मुनि योगि जन घटघट तुम्हरो अयन॥ घटघट तुम्हरो अयन सकल गति जाननवारे। दीजिय प्रभु वर युगल प्यास यह हृदय हमारे॥ हृदय हमारे तुम बसौ कहौं दूसरो विनय करि। सुता किङ्करी राखिये रानी रघुवर पाँय धरि॥ १६८॥

करि प्रणाम रघुपति चले रामसहित सब भाय। सुता चढ़ाई पालकी सुन्दर सीख सिखाय॥ सुन्दर सीख सिखाय भूप पहुँचावन आये दुन्दुभि दीन बजाय मुनिन देवन गुण गाये॥ गुण गाये पाये सबनि सगुन सुहावन अति भले। समधी भेंटि प्रणामकरि करि प्रणाम रघुपति चले॥ १६९॥

अवध पांचये दिन गये बसि बसि सकल सुवास। पुरप्रमोद आवत सुने रहसबिवश रनिवास॥ रहस विवशर निवास पहिरि शृङ्गारन रानी। आरति मङ्गल साजि गीत गावहिं मृदुबानी॥ बानी मङ्गल सजि सबै कलश चौक चामर नये। अवधनाथ सुखकी अवधि अवध पांचयें दिन गये॥ १७०॥

परिछन करि भीतर गई पुत्रबधू सुत साथ। मङ्गल मोद समाजयुत आये कोशलनाथ॥ आये कोशलनाथ पुरी हर्षित नरनारी। पुत्रबधू सुत देखि मगन तनमन महतारी॥ महतारी वारहिं सुभग भूषण पट मणिगणमई। सुभग सिंहासन चारि धरि परिछन करि भीतर गई॥ १७१॥

मुनिनायक जो जो कहेउ सो सो करि व्यवहार। दान दीन विप्रन मुदित भरि भरि कञ्चनथार॥ भरि भरि कञ्चनथार भामिनी मङ्गल गावैं। रानी भूषण देहिं सकल आशिषा सुनावैं॥ आशिष देहिं सनेह भरि शम्भु उमा परसन रहेउ। राम भाय दशरथ सुखद रहैं सदा मुनि जो कहेउ॥ १७२॥

रामबिवाह बखानई मोदसमुद्र उछाह। नारद शारद

शेष शुक गणपतिको अवगाह॥ गणपतिको अवगाह व्यास विधि कहि कहि हारे। मतिअनुरूप बखानि भजनको भाव विचारे॥ मतिअनुरूप बखानिकै गिरा सफल निजु मानई। तुलसिदासके कोन मति रामबिवाह बखानई॥ १७३॥

इति बालकाण्डः समाप्तः॥

अयोध्याकाण्ड॥

कुण्डलिया॥

अवध अनन्द प्रबन्ध सुख दिन दिन अति अधिकाय। जबते राम बिवाह करि आये कोशलराय॥ आये कोशलराय भुवन सब आनँद कूरे। ऋधिसिधिसम्पतिनदी अवधसागर भरिपूरे॥ सागरसम समानतो गयो शोक अरु दोष दुख। अमरपुरी अहिपुर धरणि अवधि अनन्द प्रबन्ध सुख॥ १॥

दशरथभाग सराहई सुर मुनिवर नरनारि। धर्म-धुरीण प्रतापनिधि जिन पाये सुतचारि॥ जिन पाये सुतचारि जासु यश वरणि न जाई। श्रीरघुपतिमुख देखि हर्ष अति लोग लुगाई॥ लोग लुगाई गुण गनत आनंद सो सुख चाहई। पुरो भाग अनुराग सुर दशरथ भाग सराहई॥ २॥

नृपसों विनय सुनायकै केकयसुवन सप्रीति। भरत-हेतु विनती करी कहि मृदुवचन विनीत॥ कहि मृदुवचन विनीत दिवस दश रहैं गुसांई। मुनिहु कहे नृप पाहि भूप

पठये दोउ भाई॥ मुनि सुखते आयसु दियो भरत उठे शिर नायकै। कैकयसुत ले भरत सँग नृपसों विनय सुनायकै॥ ३॥

बिदा रामके चरण धरि भरत शत्रुहन भाय। मातु गुरु भ्राता नृपहि चले सबहि शिर नाय॥ चले सबहि शिर नाय सुभट सेना सँग लीन्हे। श्रीरघुपतिपदकमल हृदय मन मधुकर कीन्हे॥ मनमधुकर पदकमलरति सुमिरतनाम सनेह भरि। धन्य भरत भूतल भये बिदा रामके चरण धरि॥ ४॥

नारद आये अवधपुर रामचरित हित जाहि॥ प्रेम नेम जाके अवधि रामरूप उरमाहि॥ रामरूप उरमाहि राम देखत उठि धाये। पूजत विविध प्रकार जोरि कर प्रभु शिर नाये॥ प्रभु शिर नाये बूझियो मुनि प्रकटो विधि हृदय जुर। कहन बिरञ्चि सँदेश सब नारद आये अवधपुर॥ ५॥

रामबचन सुनि मुनि गये पाय बचन बिश्वास। राम प्रकट माया करी सबके हृदय प्रकाश॥ सबके हृदय प्रकाश गुरुहि नृप जाय सुनायो। रामतिलक करि देहु नाथ सबके मन भायो॥ सबके मन भायो सुखद सुनि वशिष्ठ आनँद भये। तिलकसाज साजो मुदित रामभवन सुनि मुनि गये॥ ६॥

नृप बातें प्रकटीं सबै मुनि रघुवर समुझाय। नेम क्रिया व्रत धर्म नृप तिलक भेद विधि गाय॥ तिलक भेद विधि-गाय कहेउ भूपतिहि बुलाई। मङ्गल वस्तु मँगाय तिलककी घरी सुहाई॥ घरी सुहाई कालि है राम राज्य बैठहिं जबै। बाजे विपुल बधाय पुर नृपजातें प्रकटीं सबै॥ ७॥

राम हेतु मङ्गल रची आनो तीरथ नीर। पान फूल फल मूल तृण हय गय मणिधन चीर॥ हय गय मणि धन चीर पुरी सुन्दरि रचि राखो। बन्दनवार पताक कलश चौके

अभिलाखौ॥ अभिलाषो कुमकुम अगर बीथो केरनिसों सचौ। मणिमय दीप प्रकाशिये रामहेतु मङ्गल रचौ॥ ८॥

देखि देव शोचत भये अवध रामको राज। दुष्ट कष्टको नाशि है निश्चय भयो अकाज॥ निश्चय भयो अकाज सुमिरि शारदा बुलाई। राम विपिन कहँ जायँ मातु सो करहु उपाई॥ राम विपिन कहँ जायँ जब कर उपाय बुधि बलमये। चरण गहैं पालन करौ देखि देव शोचत भये॥ ९॥

धिक धिक देवन कहि चली आगे हेतु विचरि। अवध गई रानी जहाँ देखी सुमति सँभारि॥ देखी सुमति सँभारि तहां परवेशन पायो। कण्ठ मन्थरा बैठि तासु चित हित भरमायो॥ हित भरमायो तेहि सबै प्रिया केकयीकी अली। पुर दुखदायिनि सो भई धिक् धिक् देवन कहि चली॥ १०॥

नगर देखि बातैं कही हित तोरनकी बात। मोहिं शोच एक उर भयो जो फुर मानहु बात॥ जो फुर मानहु बात हितू हेतौ दुख जानै। काज नशात विचारि विना पूछेहु बखानै॥ बिनपूछे प्रभुके वचन इन बातैं पातक नहीं। उतर देत नहिं दोष है नगर देखि बातैं कही॥ ११॥

इन ठौरनि पूछे बिना कहै स्वामिसों दास। सर्प अग्नि अरि विष अनल अनिल कष्ट दुर्वास॥ अनिल कष्ट दुर्वास अशन पथ्य अपथ्य जनावै। लाभहानि दुखदानि कहत पातक नहिं आवै॥ लाभहानि नहिं बोलई प्रभु आयसु रुख निशि दिना। स्वामि सुहागिलि देहि सिख इन ठौरन पूछे बिना॥ १२॥

मोहिं भामिनी दुख भयो समुझि एक उत्पात। सब पुरको नीको लगै तुम्हैं भरतको घात॥ तुम्हैं भरतको घात

बान ब्टपरानि विचारी। कालहि राम ब्टप होहिं भई शोभा पुर भारी॥ भारि विपति विचारिकै हृदय मोर दुखयुत तयो भरत विदेश नरेश पर मोहिं भामिनी दूख भयो॥ १३॥

विपति बीज अङ्कुर भयो बयो कौशला रानि। पावस ब्टप उर देखि शुभ आयसु सुन्दर पानि॥ आयसु सुन्दर पानि अवधथलसुत बल पाई। गुरु पुरजन भे वारि तुम्हें नित कीन्ह उपाई॥ कीन्ह उपाय सहाय सब भरत तेज तप सो गयो। चारि दिवस गत देखियो विपति बीज अङ्कुर भयो॥ १४॥

सत्य मानि रानी कहै कहु सखि मोहिं उपाव। भरत गये असगुन भये सो सब यहै प्रभाव॥ सो सब यहै प्रभाव सुहृदसम मैं सब जानौं। सवति ईरषा छाँड़ि पुत्र पति आपन मानौं॥ आपन मानि न कछु कहिय ब्टप मलीन उबरन चहै। हितू जगत मेरी तुही सत्य मानि रानी कहै॥ १५॥

कहि सुखाय रानी बदन जनि मन करसि मलीन। द्वै वर तेरे ब्टप चहैं लेहि मांगि परवीन॥ लेहि मांगि परवीन देखि दृढ़ वचन न डोलै। राम विपिन सुत राज्य सत्य करि ब्टपसन बोलै॥ राम विपिन जब जाय हैं भरत भूप होई सदन। सवति हृदय यहि भाँति दहि कहि सुखाय रानी बदन॥ १६॥

मन प्रतीति रानी भई लई सीख उर मानि। जो कछु मन रघुपति चहैं सोई सत्य उर आनि॥ सोई सत्य उर आनि कोपके भवन सिधाई। दुर्गति करि तन दशा मनहुं यमपुरते आई॥ दशा मनहुं ब्टप मरणकी धरणि कुलक्षणकी मई। देवि कुरीति सुरीति सिख मन प्रतीति रानी भई॥ १७॥

का न करहि यह कर्मबल केहि जग यम नहिं लीन। पवन उगायो काहि नहिं को दुख दुखी न दीन॥ को दुख दुखी न दीन मोहमद केहि नहिं बाध्यो। तृष्णाज्वर नहिं जरयो कामशर काहि न साध्यो॥ काहि न साध्यो क्रोधदल केहि न चल्यो तरुणीतरल। चितचिन्ताशालिनि यथा का न करहि यह कर्मबल॥ १८॥

अवधपुरी अमरावती बाजैं विपुल बधाव। सबके उर आनन्द अति रामतिलक सतिभाव॥ रामतिलक सतिभाव साँझ समया रूप पायो। सरल सुहृद रूप हृदय कैकयी गृह चलि आयो॥ आयो सुनि रिसके सदन वदन पीत भय छावती। अवधनाथ सुरपति सरिस अवधपुरी अमरावती॥ १९॥

सो दशरथ कम्पहि हिये काम प्रताप बलीन। जाकी वश लय लोकमहँ केहि अनर्थ नहिं कीन॥ केहि अनर्थ नहिं कीन चन्द्र सुरपति गति देखो। रूप दिलीप सुनि शम्भु ययातिहि चित अवरेखो॥ चित अवरेखहु कामबल तीनिलोक भेदित किये। ताको शर रूप उर गड़्यो सो दशरथ कम्पत हिये॥ २०॥

देखि जाय रानी विकल भूमि शयन तन दीन। पट पुरान सूखे अधर नयन अरुणरँग पीन॥ नयन अरुणरँग पीन मनहुँ दुर्दशा अनैसी। विपति नारिके रूप कुमति जसि प्रकटति तैसी॥ प्रकटति वचन वदनमहँ कुमतिसाज धरि छल कुथल। भूप सभय पैठे भवन देखि जाय रानी विकल॥ २१॥

क्रोध कौन कारण कियो गजगामिनि वरनारि। जोइ माँगसि सोइ देउँ तोहिं कामादिक फलचारि॥ कामादिक फलचारि तोहिं परतीति सदाई। तेरे सुखके हेतु तिलकको

घरी घोषाई॥ घरी घोषाई तिलकको अवध लोग सुनि सुनि जियो। करि प्रबोध नृप पाणि गहि क्रोध कौन कारण कियो॥ २२॥

उठि बैठी बोलत भई करि कटाच्छ सुसुकाय। भूप न जानै सुहृद हृदि नारि चरितके भाय॥ नारि चरितके भाय विधिहु नहिं जाननहारे। है वर याती देहु और हम तजे तुम्हारे॥ तजे तुम्हारे दानिता कहौं शपथ खाँचो नई। फिरि न टरै कहि उचरौं उठि बैठी बोलत भई॥ २३॥

शपथ सत्य लखि काह चलि वचन अमङ्गलमूल। देहु एक बर प्रथम यह भरतराज्य अनुकूल॥ भरतराज्य अनुकूल दूसरो माँगहुँ सांई। चौदहवर्षविशेषि राम बन मुनि की नांई॥ मुनिकी नांई जाहि बन कालहि राम तौं अति भली। मोर मरण अपनो अयश शपथ सत्य लखि कहि चली॥ २४॥

सुनि भूपति उर अति दल्यो बज्र हृदय जनु लाग। मुख सुखान लोचन सजल प्राण विकल भय भाग॥ प्राण विकल भय भाग मूँदि राखे दोउ लोचन। शोक दाह उर ढ़ह्त कहत कछु बनत न शोचन॥ बनत न शोचन मुख वचन मनहु प्रेत कर्मनि छल्यो। धुनत शीश व्याकुल शिथिल सुनि भूपति उर अति दल्यो॥ २५॥

भये बिकल सुनि नृप कहो बचन लगे जिमि बान। सत्य-संधता मन किये कह्यो देन बरदान॥ कह्यो देन बरदान बचन किन कह्यो सँभारे। कौशल्यासुत सुवन भरत नहिं सुवन तुम्हारे॥ भरत सुवन पठये कुशल रामतिलकआनँद महा। साधेउ छल तस फल लहो भये बिकल सुनि नृप कहा॥ २६॥

नयन उघारे नृप कहत समुझि प्रिया वर माँगु। भरत भूपको तिलक पुर तामें लगै न दागु॥ तामें लगै न दागु राम बन पठवति काहे। कौन लाग अपराध राम सब साधु सराहे॥ साधु सराहे नारिनर अब अचर्य छाती दहत। ताते समुझि बिचारि कछु नयन उघारे नृप कहत॥ २७॥

ये न वचन टरि हैं नृपति मरहु उजरि पुर जाय। अयश अवधि विधना करहि अघ रविबंश नशाय॥ अघ रविबंश नशाय होय पुर काल हवाले। कलह कपटकी आगि अवनि भगि जाय पताले॥ भगि पताल अवनी घटै रवि शशि रेंगहिं उलटि गति। विधि हरिहर आपुहि कहैं ये न वचन टरि हैं नृपति॥ २८॥

अनल चन्द वरषै कबहुँ शीतल सूरज होय। शेष तजै धरनी धरन समुद विना जल जोय॥ समुद विना जल जोय शत्रु शिर चन्द्र प्रजारै। तिमिर दहै रवि रूप वृद्धकर दण्डहि डारै॥ दण्डहि विधि जग सृष्टि सब नारायण मिटि जाहिं कहुं। ये न वचन नरपति टरैं अनल चन्द वर्षैं कबहुँ॥ २९॥

राज्य न चाहैं भरत पुर लागो तोहिं पिशाच। मोरि मृत्यु बोलत वचन तव सुख चढ़ि शिर साँच॥ तव शिर चढ़ि करि साँच राम नृप होवहिं भारी। तुहि कलङ्क दुख मोर मिटहि कबहुँक नहिं नारी॥ नारी करि चित चाहिकै वचन मोर जिय जानि फुर। राम भूप सेवक अनुज राज्य न चाहैं भरत पुर॥ ३०॥

बसो अवध नृप राम हैं यह जानत सब कोय। मोर मरण ओ भामिनी यह सुख लख्यों न सोय॥ यह सुख लख्यों न सोय सत्य जिय जानेसु भामिनि। मीन जियै बिनु बारि राम बिनु जियों न भामिनी॥ जियों न भामिनि

दिन वृथा जानि मरण परिणाम है। तू अभागिनी तनु लियो बसी अवध नृप राम है॥ ३१॥

राम राम कहि नृप गिरो कुमति न मानी बात। अवध बधाव अनन्द बड़ नींद न लागी रात॥ नींद न लागी रात कालहि शुभ घरी सुहाई। देख्यो जाय सुमन्त भूप गति मति बिकलाई॥ मति बिकलाई देखिकै लखि कुचाल आतुर फिरो। आये राम लिवायकी राम राम कहि नृप गिरो॥ ३२॥

पितु उठाय बोले वचन नृपति लीन उर लाय। नयन नीर धारा धसै वचन बोलि नहिं जाय॥ वचन बोलि नहिं जाय राम पूछी महतारी। कहति कठोर कुबैन कथा करणी कटु भारी॥ कटु भारी सो हेतु सुनि तन प्रसन्न कह मृदु वचन। लघु उपदेशत दुख महा पितु उठाय बोले वचन॥ ३३॥

राउर चरण प्रतापते बन सुद मङ्गल मोहि। सुनि तीरथ देवन दरश मोर पर्महित होहि॥ मोर पर्महित होहि जात दिन बिलम न लागै। आतुर ऐहौं अवधि धरन पुनि चरन लभागै॥ धरन चरन पुनि आय हौं आयसु देहु प्रतापते। कुशल क्षेम घर आयहौं राउर चरण प्रतापते॥ ३४॥

उत्तर कढ़ेउ न भूपमुख राम धरे नृपपाँय। कुमति कठोर कुवचन कटु मातु कहत मुसक्याय॥ मातु कहत मुसक्याय हृदय कोड़त नहिं राजा। करि प्रबोध शिर नाय विपिनकी साजि समाजा॥ साजि समाज प्रसन्नमुख गहे मातुपद प्रेम सुख। राम चलत व्याकुल गिरो उत्तर कढ़ो न भूपमुख॥ ३५॥

मातु गोद मोदति भरे कहति वचन आनन्द। कालहि लिखक नृप सुख सज्यो कितिक बार सुख वृन्द॥ कितिक बार सुख वृन्द लाभ लोचनून सब टौ। सिंहासन सिय

सहित निरखि रविशतद्युति छूटी॥ रविशतद्युति छूटी अवधि मधुर लाल भोजन धरे। न्हाय खाउ बड़ बार सो मातु गोद मोदति भरे॥ ३६॥

राज विपिनको मोहिं दयो जहाँ मोर बड़ काज। राउर चरणप्रतापते कुशल आइ हौं साज॥ कुशल आइ हौं साज मातु आशिष मोहिं दीजै। जात दिवस नहि वार हर्षि मन आयसु कीजै॥आयसु कीजै हर्षिके मातुचरण प्रभु शिर नयो। कह मृदु दृढ़ कर जोरिकै राज विपिनको मोहिं दयो॥ ३७॥

सहमि सुखानी सुनि वचन सिया धरे पग आय। राम बुझाई जानकी विपिन विपति सब गाय॥ विपिन विपति सब गाय सुनत लक्ष्मण उठि धाये। कहि कहि विविध प्रकार लषण सिय प्रभु समुझाये॥ समुझाये प्रथमहि सिया करि विवेक बन प्रिय सदन। उत्तर ककुक न सिय दयो सहमि सुखानी सुनि वचन॥ ३८॥

धरि धीरज कह जानकी मन समुझिय रघुराय। कण्टक-बन दावा अनल अनिल व्याल दुखदाय॥ अनिल व्याल दुख दाय व्याघ्र वृक अहि गज घेरे। सूकर भालु पिशाच विषम बन भय बहुतेरे॥ बहुतेरे उत्पात जे उरन दहे भय आनकी। प्रभु वियोग छाती दहे धरि धीरज कह जानकी॥ ३९॥

विपिन आपु सँग अति सुखी डासि पात तरु छाह। गिरिगण सरि सरवर मुदित क्षुधा तृषित नहिं दाह॥ क्षुधा तृषित नहि दाह निरखि पदकमल तुम्हारे। श्रमपथ तनक न लेश सकल विधि प्रभु रखवारे॥ प्रभु रखवार बिचारिये तजे जीव जानिय दुखी। त्यागिय मोहिं विवेक करि विपिन आपु सँग अति सुखी॥ ४०॥

प्रभु सुखपर नहिं प्रण करौं उत्तर दीन्हे पाप। तजौ तो

कहा बसाय पिय समुझि बिचारिय आप॥ समुझि बिचारिय आप प्राण तन त्यागि निवारौं। प्रभु सँग जाइय धाय देह घर राखिय डारौं॥ राखिय डारौं देह घर बहुत कहत पातक डरौं। सत्य मन्त्र मन दृढ़ धरयौं प्रभु मुखपर नहिं प्रण करौं॥ ४१॥

तुम लक्ष्मण मानौ कहौ राम सिखावन देत। मात पिता पुर शोच सब नाशहु वसौ निकेत॥ नाशहु विघ्न अनेक अवधपुर भरतहु नाहीं। भूप वृद्ध नरनारि दुखित मम दुख मनमाहीं॥ दुख मनको दूषण तजौ मानि मन्त्र राख्यो सही। दूषण देइहि मोहिं नर तुम लक्ष्मण मानौ कही॥ ४२॥

प्रभु वनमें हौं घर रहौं आयसु तज्यो न जाय। प्राण बायु मम बश नहीं देह कहौ तहँ जाय॥ देह कहौ तहँ जाय भार यह कापर डारौ। मैं सेवक शिशु कुमति चरणरज सेवनवारौ॥ सेवनवारौ रज चरण धर्म नीति मग किमि लहौं। अवध काज मेरो कहा प्रभु बनमें हौं घर रहौं॥ ४३॥

मातुचरण रघुवर नये बिदा माँगि कर जोरि। अश्रु धार धाई धरणि माता कहति बहोरि॥ माता कहति बहोरि कठिन उर फाटत नाहीं। ठाढ़ी देखत नयन राम सुत कानन जाहीं॥ कानन जाहि बिशेषिकै सबके सुख सुरुति गये। भेटि लाय उर यह कह्यो मातुचरण रघुबर नये॥ ४४॥

गुरुपाँयन पुर सौंपिकै लीन लषण सिय साथ। चले भूप मंदिर जहां विदाहेतु रघुनाथ॥ विदाहेतु रघुनाथ राय उठि हृदय लगाये। नयनधार अन्हवाय राम बहुबिधि समुझाये॥ समुझाये नृप राम बहु सिया प्रेम उर तोपिकै। लषण भेंट भूपति गिरयो राम चले गुरु सौंपिकै॥ ४५॥

करि प्रणाम रघुपति चले त्यागि अवध सुखमूल। सब-को सार सँभार करि मेटि मोहमय शूल॥ मेटि मोहमय शूल लोग सब व्याकुल भागे। रामविरहकी आगि नारिनर उठि सँग लागे॥ सँग उठि लागे नारिनर कालकर्म गुण दल दले। शिर धरि रानि बखानि कटु करि प्रणाम रघुपति चले॥ ४६॥

भूप बुलाय सुमन्तको सिखदै दयो पठाय। सुनत सचिव आतुर चल्यो स्यन्दन तुरत बनाय॥ स्यन्दन तुरत बनाय विनय करि राम चढ़ाये। तमसातीर निवास प्रथम दिन रघुपति आये॥ प्रथम लोग तजि प्रभु उठे सचिव साधि रथ तन्तको। गये राम जिय जानि सब सङ्ग बुलाय सुमन्तको॥ ४७॥

रामविरह दावाअनल भयो अवध वन घोर। पुरवासी खग मृग भये रहैं सुखी सब ठौर॥ रहैं सुखी सब ठौर-कैकयी भई किराती। ज्वाल बढ़ै चहुँ ओर जरति निशि दिन तन छाती॥ अवधि सेवकी आश उर रहि न सकत तप कठिन बल। सो उपाय व्रत जप सुहृद रामविरह दावा-अनल॥ ४८॥

राम गये सुरसरि निकट केवट परम हुलास। वचन सुमन्त बुलायके बोले राम प्रकाश॥ बोले राम प्रकाश तात अब अवध सिधावै। पितुपद गहि मम ओर कुशल सब विधि समुझावै॥ समुझाये कहि कोटि विधि तदपि परयो सङ्कट विकट। चले कर्मवश सचिव पुर राम गये सुरसरि निकट॥ ४९॥

माँगी नाउ निहारिकै राम कहे मृदु बैन। सुनत बात केवट कहै सुनिये राजिवनैन॥ सुनिये राजिवनैन रावरो

पदरज खोंटी। मानुष उड़ि उड़ि जात काठको गति है छोटी॥ गति है छोटी मोरि प्रभु बात कहौं डर डारिकै। रज मानुष कर मूरि कछु मागहु नाउ निहारिकै॥ ५०॥

तरनि होय मुनिकी घरनि मरै सकल परिवार। कोटि करौ बानन छरौ कहौ बचन शतबार॥ कहौ बचन शतबार नाउ नहिं तुम्हैं कुआऊं। अपने कुलकी हानि होय जो तुम्हैं चढ़ाऊं॥ तुम्हैं चढ़ाऊं नाथ जब चरण प्रक्षालौं निज करनि। बिन धोये न चढ़ाय हौं तरनि होय मुनिकी घरनि॥ ५१॥

चरण प्रक्षाल बिलम्ब कह राम कह्यो मुसक्याय। पानी आन्यो दुहुं करनि धर्यो कठोता आय॥ धर्यो कठोता आय पाँय पुनि धोवन लाग्यो। देवन बर्षैं फूल कहत यहि समको भाग्यो॥ यहि सम बड़भागी कहा शिवबिरञ्चि पदकमल चह। धन्य धन्य कहि सकल सुर चरण प्रक्षाल कुटुम्ब सह॥ ५२॥

कौन पार परिवारको चरणसुधाजल प्याय। पीछे पार उतारियो निज कर कोशलराय॥ निज कर कोशल-राय उतरि सिय सहित बहोरी। केवट लौन बुलाय लेहु उतराई थोरी॥ उतराई थोरी लहो तोहिं भयो श्रम पारको। दीन देखि मोहिं दीन बहु पार कौन परिवारको॥ ५३॥

ते पद धोये आजु मैं शिव बिधि योग कमाहिं। जिन चरण नको शेष श्रुति बरणत निशिदिन जाहिं॥ बरणत निशिदिन जाहिं प्रकट कीन्हो जिन गङ्गा। अशरण शरण पुनीत पगनिको बिरद अभङ्गा॥ बिरद अभंग प्रमाणको धोये जनक समाजमैं। सकल सिद्ध सिद्धन दई ते पद धोये आजमैं॥ ५४॥

बिमल भक्ति बर दै चले राम लषण सिय सङ्ग। बन गिरि सरिसर ग्राम पुर देखत मृगजु बिहङ्ग॥ देखत मृगजु बिहङ्ग

ग्रामपुर निकसहिं जाई। देखि कहहिं नरनारि रामसिय सुन्दरताई॥ रामसिया सह अनुज युत देखि भाग तिनके भले। प्रेम नेम जप योगफल बिमल भक्ति बर दे चले॥ ५५॥

एक कहत मुख चन्दसों भामिनि भावत मोहि। कला कोश शशि शीतकर सीता कलित सजोहि॥ सीता कलित सजोहि श्याम रेखा शशिमाहीं। सिय मुखपर लट श्याम सुभग वरणत कवि ताहीं॥ वरणत कवि मृगअङ्क कहि यह मृगनयन अनन्दसो। ताप हरत यह शशिमुखी एक कहत मुख चन्दसों॥ ५६॥

एक कहति मुख कमलसो और न पटतर ताहि। अरुण सुवासित अति मृदुल सो सियमुख अवगाहि॥ सो सियमुख अवगाहि शीत सुत वह यह सीता। कवि वरणत हैं वाहि याहि मुख सुयश पुनीता॥ सुयश पुनीता दुहुनको भ्रमर मिल युग सुयलसो। और कहाँ उपमा लगै एक कहति मुख कमलसो॥ ५७॥

सीतामुख सो मुख कहौ कमल चन्द्र सो नाहिं। कमल मन्द है रजनि द्युति चन्द मन्द दिनमाहि॥ चन्द मन्द दिनमाहि राहु हिमिशत्रु सदाई। सीतामुख अरि नाहिं लोकतिहुँ खोजहु जाई॥ लोकतिहूँ महँ बिदित है घटै बढ़ै निशिदिन लहौ। कमल चन्द पटतर कहाँ सीता मुख सो मुख कहौ॥ ५८॥

एक कहैं पुर धन्य है मातु पिता पुनि धन्य। जिन देखे ते धन्य हैं जहाँ जात धन धन्य॥ जहाँ जात धन धन्य बिटप गिरि सरि सर जेते। खग मृग निरखत धन्य बसत थल बैठत तेते॥ बैठत तेते सङ्ग हँसि बोलत चितवत धन्य हैं। धन्य पथ वन धन्य हैं हम देखत अति धन्य हैं॥ ५९॥

राम लषण सीता सहित देखि प्रभाव प्रयाग। न्याय दान दीन्हे द्विजन प्रीति सहित अनुराग॥ प्रीति सहित अनुराग दर्शसुख सबहिन पाये। दुख सुख सबको देत आपु ऋषिआश्रम आये॥ आश्रम आये सुनत ऋषि भरद्वाज आनद लहित। आसन आदर मुनि करयो राम लषण सीता सहित॥ ६०॥

राम तुम्हारे दर्शते यह फल प्रकट दिखात। नेम प्रेम जप योग तप तीरथ व्रत दुख गात॥ तीरथ व्रत दुख गात आजु सब सुफल हमारे। राउर आगम लहत नयन मुख सुखद निहारे॥ सुखद निहारे सुख भयो तीरथ राउर परसते। भयो सोइ मङ्गल परम राम तुम्हारे दरसते॥ ६१॥

भोर प्रयाग नहायके राम लषण सिय साथ। चले मनोहर मनहरन वन्दि चरण मुनिनाथ॥ वन्दि चरण मुनिनाथ मदन रति ऋतुपति मानो। ब्रह्म जीवके मध्य लसत माया छबि जानो॥ माया छबि लय देखिधौं उमाशंभु गण नायके। चले किधौं सुरपति शची भोर जयन्त लिवायके॥ ६२॥

पथ्य चरित सिय रामको सबसुख मङ्गलदाय। राम लषण सियदर्शते खग मृग सुखी सुभाय॥ खग मृग सुखी सुभाय परमपदके अधिकारी। को न लहै सुख सकल सुखद वर वदन निहारी॥ वदन निहारि सप्रेममय भरयो पर्म सुख धामको। गिरि तरु खग मृग नारिनर देखि चरित सिय रामको॥ ६२॥

बालमीकिआश्रम गये सिया लषण रघुराय। आये मुनिवर मिलनको भेटे हृदय लगाय॥ भेटे हृदय लगाय पूजि परिपूरण कीन्हे। आसन आदर देय फूल फल अङ्कुर दीन्हे॥

कर दीन्हे अभिय सम वस्तुति आनँद मन भये। सकल सिद्ध साधन सुफल वालमीकियाश्रम गये॥ ६४॥

जाके हित मन गोल सित साधत साधन धाम। मोह-मदादिक गण तजे अहनिशि जागत याम॥ अहनिशि जागत जाम जापतप योग विरागे। मानस ब्रह्मणि रूप रहत निशिदिन अनुरागे॥ निशिदिन अनुरागे रहैं ज्ञान ध्यान मन्दिर लहित। सो प्रत्यक्ष मूरति लखी जाके हित मन गोल सित॥ ६५॥

राम कह्यो कर जोरिके मुनिनायक सुनि वैन। आश्रम पावन दीजिये जहां करौं शुचि अयन॥ जहाँ करौं शुचि अयन विघ्न कछु तहाँ विनाऊँ। जानत कारण सकल कहा कहि प्रकट जनाऊँ॥ प्रकट जनाऊँ आश्रम न देहु मुनीश निहोरिकै। चलिय कृपा करि देहु मुनि राम कहेउ कर-जोरिकै॥ ६६॥

सुन्दर गिरिगण सरित बन दीख जाय मुनि सङ्ग। कहत महातम पर्म थल देखि होय दुख भङ्ग॥ देखि होय दुख भङ्ग सुखी खगमृग वनचारी। तरुवर फलित विभाग सुधासम सुन्दर वारी॥ सुन्दर जल थल निरखि यह चित्रकूट मङ्गल सरित। पावन करिय विहारथल सुन्दर बन गिरिगण सरित॥ ६७॥

राम लषण आश्रम कर्यो चित्रकूट सिय सङ्ग। मनहु विपिन वसि तप करत रति ऋतुराज अनङ्ग॥ रति ऋतुराज अनङ्ग राम लखि सुख बनचारी। भरि भरि दोना सफल भेट धरि बदन निहारी॥ बदन निहारि निहारि सब मगन सदन मङ्गल भर्यो। विपिन भयो कामद सुखद रामलषण आश्रम कर्यो॥ ६८॥

अब सुमन्त्र अवधहि चले राम बिदा जब कीन। हय न

चलहिं रघुबरबिरह सचिव भयो दुख दीन॥ सचिव भयो दुख दीन शिथिल रथ हाँकि न आयो। बिकल बिषाद निहारि अवध केवट पहुँचायो॥ केवट गृह आयो बहुरि साँझ पाय अवसर भले। हानि गलानि बिहाल उर अब सुमन्त अवधहि चले॥ ६९॥

कहु सुमन्त कहँ रामसिय उठे बिकल नरनाह। सचिव हृदय भेटेउ नृपति नयनन नीरप्रबाह। नयनन नीरप्रवाह सचिवसन बोलि न आयो। रामसिया सन्देश सकल मुख कहन न पायो॥ कहन न आयो सुखवचन ब्रह्मरन्ध्रपथ कढ़्यो जिय। लखण रामसिय रामसिय कहु सुमन्त कहँ राम-सिय॥ ७०॥

भूपभवन रोदन पर्यो रानी पुर नरनारि। अवधनाथ अथयो मनहुँ रविनिशि अवध निहारि॥ निशि सम अवध निहारि गारि सब कुमतिहि देई। बिपति वियोग कुयोग कलह दृढ़ दीन्हेसि नेई॥ दीन्हेसि सबकहँ दुसह दुख जेहिके करतब नृप मर्यो। हाय हाय लायो नगर भूप-भवन रोदन पर्यो॥ ७१॥

राखि भूप तन करि यतन कह वशिष्ठ समुझाय। दूत पठाये भरतपहँ आतुर चार बुलाय॥ आतुर चार बुलाय भूप गति प्रकटेहु नाही। गुरु बुलाये भरत बेगि लै गमनहु ताही॥ गवन कीन् शिर नाय तब हयगति मारग सुनि वचन। मुनि बुझाय रानी सकल राखि भूपतन करि यतन॥ ७२॥

गुरुसँदेश आये भरत अशकुन नगर नगीच। श्वान शृगाल उलूक खर बोलत अशुभ कुनीच॥ अशुभ कुनीच भरत मति गति थिति नाहीं। भरत देखि नरनारि बाम दाहिन चलि जाहीं॥ बाम अवधपुर देखिके दुखज्वरसों

छानी जरति। धरत पावँ डगमग परत गुरुसँदेश आये भरत॥ ७३॥

भूषण भाजन साजिकै सुन आगमन विचारि। लै आई केकयसुता सुत आरती उतारि॥ सुत आरती उतारि भाय दोउ भ्रमते भूले। पियो न जल थल बैठि शूलके अङ्कुर शूले॥ अङ्कुर शूल विचारिके कुशल पूंछि निजराजिके। तोछो सुतदाहक वचन भूषण भाजन साजिकै॥ ७४॥

कुशल राज्य सब काजमैं राख्यों पुत्र सुधारि। भई मन्थरा परमहित दुख दूषण सब जारि॥ दुख दूषण सब जारि राज सब तुम्हते जाग्यो। कण्टक भे सब दूरि अगम वर नृपसन माँग्यो॥ अगम सुधारो बात मैं नृप सुरपुर सुखसाजमैं। कछुक बिगारयो विधि यहै कुशल राज्य सब काजमैं॥ ७५॥

रामलषण सिय बन गये मरे भूप तेहि शोच। तुमकहँ राज्यविलास अब कीजे छाँड़ि सकोच॥ कीजे छाँड़ि सकोच होत सब विधिको कीनो। मरन जियन जग रीति लेहु पुर राज्य नवीनो॥ राज्य सुनत व्याकुल गिरयो रोदन करि मूर्च्छित भयो। तात तात हा तात कहि रामलषण सिय बन गये॥ ७६॥

परै न कौरा मुहँ जरयो वर मांगत जड़ तोहिं। कुमति कठोर न नृप लखो मिथ्या जन्मे मोहिं॥ मिथ्या जन्मे मोहिं बाँझ तू भई न काहे। ऐसो कुमति कठोर कर्म करि सो उर दाहे॥ दाहे उर खल वचन मुख राम विपिन-कह मन धरयो। को तू काके रूप धर परै न कौरा मुख जरयो॥ ७७॥

पौतम मारत नहिं डरी बन पठये सियराम। प्रेत पिशाचिनि रूप तू भई कहांको वाम॥ भई कहांको वाम

राम तोहिं अनहित लागे। जोहसि सो उठि बैठु ओट तजि आँखिन आगे॥ आँखिन आगेते टरै धिक मैं जन्मयों जोहि घरी। रामसुवन पठये बनहिं पीतम मारत नहिं डरी॥ ७८॥

आई दुखदायिनि तिया नाम मन्थरा जाहि। भूषण-भार सृँगारि तन रिपुहन लखि चष चाहि॥ रिपुहन लखि चष चाहि दौरि पग कूबर मारयो। परी धरणि धरि केश घसीटत तनक न हारयो॥ तनक न हारयो बीर तब भरत जाय रचण किया। उठे त्यागि कुल दाहिनी आई दुख दायिनि तिया॥ ७९॥

उठत कौशला गिरि परीं भरत देखि उठि दौरि। लीन्हे हृदय उठायके आँगन गिरीं बहोरि॥ आँगन गिरीं बहोरि रोय दीन्हों दृहुं आई। मातु लगाई कण्ठ अश्रु धारा नह-वाई॥ नह वाये चषनीरते बीर भरत धीरज धरी। बिकल भरत समुझावती उठत कौशला गिरिपरी॥ ८०॥

अञ्चल नयन लगायके आँसू पोंछति मात। तोहिं बिना सुत यह दशा उठन न पैयत गात॥ उठन न पैयत गात रामसिय बनहिं सिधाये। पुर परिजन भे बिकल लषण सिय बहु समुझाये॥ बहु समुझाये नहिं रहे राम चले सँग लायके। सुनत भरत जलसों भरे अञ्चल पोंछति धायके॥ ८१॥

मातु जगत जन्मयों बृथा भई न केकयि बाँझ। राम सियां अप्रिय भयो अयशमूल जगमाँझ॥ अयशमूल जगमाँझ जासु हित यह शति तोरी। जन्मत हत्यो न मोहिं देति विषमाहुर घोरी॥ माहुर दै मारयो जगत कुल कुठारि उपज्यो यथा। नृपगति यह रघुपति विपिन मातु जगत जन्मयो बृथा॥ ८२॥

सुर गुरु द्विज पातक परैं जो जानत यह बात। बाल बालवध अघ अयश गाय गोठ पुर घात॥ गाय गोठ पुर घात मीत नृप माहुर दीन्हे। परधन परतियहानि परै अघ गोवध कीन्हे॥ गोवध निंदावेदको पर अपकारी अघ करै। जो जननी जानहुँ तनक सुर गुरु द्विज पातक परै॥ ८३॥

परघर अग्नि लगावहीं कुपथ पन्थ पग देयँ। बल करि तिय परधन हरैं रण भगि अपयश लेयँ॥ रण भगि अपयश लेयँ मातु पितु विप्र न मानैं। हरिहर पदते विमुख भूत प्रेतन उर आनैं॥ उर आनैं तीरथ कुकृत निज कुटुम्ब तृण लावहीं। जो जानों तौ अघ परैं परघर आगि लगावहीं॥ ८४॥

लोभ मोह फाँसे रहैं साधु सङ्ग नहिं लेयँ। मीत विप्र कुल कष्ट लखि अशन नीर नहिं देयँ॥ अशन नीर नहिं देयँ कूप सर बाग विध्वंसैं। तन पोषक बिन तोष यहत विष धन पर अंसैं॥ पर अंशैं जे नित धरैं कुवचन बोलि छाती दहैं। तिनकी गति विधि देहु जग लोभ मोह फाँसे रहैं॥ ८५॥

ते नर जग हो ते मरै करैं जन्म भरि पाप। रणमण्डल अपयश लहैं देहिं विप्र गुरु ताप॥ देहिं विप्र गुरु ताप बसत वर लाय उजारैं। सन्तसभा नहिं बैठि मृषा मुख वचन उचारैं॥ मृषा साखि जग उच्चरैं नित्य रारि उठि गृह करैं। रामसिया जेहि प्रिय नहीं ते नर जग होते मरैं॥ ८६॥

तुम सुत शपथ न खाँचियो राम प्राण प्रिय तोहि। तुम रामहि अति प्रिय सदा विधि गति बाँकी होहि॥ विधि गति बाँकी होहि देहु दूषण जनि काहू। कर्म प्रधान किसान ब-

वै लुनियत सोइ लाहू॥ वयो लुनियत जगतमें भूप मरे हम बाँचिये। राम चले प्राण न चले तुम सुत अपण न खाँचिये॥ ८७॥

बड़े भोर मुनि आयगे बैठेहि रैनि बिहानि। भरत बुलाय वशिष्ठ मुनि भूपक्रिया बिधि आनि॥ भूपक्रिया बिधि आनि दाह सरयूतट दीन्हो। रानिन केर प्रबोध भरत पाँयन परि कीन्हो॥ पाँयन परि करि कर्म सब तिल अञ्जलि कृत रायके। भरत सिखाये मृत करम बड़े भोर मुनि आयके॥ ८८॥

हय गय मणि भूषण दये सिंहासन महिसाज। धेनु बसन आयुध चवँरछत्र पात्र शिरताज॥ छत्र पात्र शिरताज स्वमति गति मुनि जस भाषी। शत शत कौन विधान भरत करणी अभिलाषी॥ करि करतूति प्रमाण जस सब प्रकार बिधिवत भये। शुद्ध सिद्ध करि काज सब हय गय मणि भूषण दये॥ ८९॥

शुद्ध भये मुनिवर गये जहां राजदरबार। नगर महाजन बिप्रजन सचिव सुभट सरदार॥ सचिव सुभट सरदार बोलि पठई सब रानी। भरत शत्रुहन साथ बोलि लीन्हे मुनि ज्ञानी॥ मुनि ज्ञानी बैठारि ढिग मधुर बचन बोलत भये। राजसभा दरबार सब शुद्ध भये मुनि वर गये॥ ९०॥

नृपति प्रेम पूरण कियो तेहिको शोचिय नाहि। जाको यश शशि धर्दको को नहिं देखि सिहाहि॥ को नहिं देखि सिहाहि भोग सुरपति सम कीन्हो। राम बियोग कृशानु प्राण तेहि तृण धरि दीन्हे॥ राम लषण तुम शत्रुहन चारि सुवन लखि भगजियो। बिछुरि गयो सुरलोक बर नृपति प्रेम पूरण कियो॥ ९१॥

राम स्वभाव सनेहको कहिय कौन विधि गाय। पितु आयसु सुनतहि उठे सब पुरजन समुझाय॥ सब पुरजन समुझाय सिया लखनहि समुझायो। प्राण तजौं यह जानि सुख करि शोचन आयो॥ शोचन आयो भूपको भूपति वचन सनेहको। धर्मशील गुणको कहै रामस्वभाव सनेहको॥ ९२॥

कठिन कैकयी का कहौं कहतहु कही न जाय। कुमति कुआगि बसायके दीन्हो अवध लगाय॥ दीन्हो अवध लगाय राम सिय बनहिं सिधाये। पुर परिजन मन शोच भूप हठि प्राण पठाये॥ प्राण गवाँये भूपवर भावी गतिको नहिं कहौं। विधि विधता अति कठिन है कठिन कैकयी का कहौं॥ ९३॥

भूप वचन प्रिय प्राण नहिं भरत सुनौ सतिभाव। सो पुरको जिय शिर धरिय धर्म स्मृति श्रुति गाव॥ धर्म स्मृति श्रुति गाव तजे रघुवर जेहि लागौ। मातु सचिव पुर लोग भरत ज्वर नाशहु आगौ॥ नाशहु आगौ अवधको अवधि लगे नृप राज्य लहि। दोष न कछु मानस करो भूपवचन प्रिय प्राण नहि॥ ९४॥

कहत कौशला पाँय परि पूत सुनहु गुरु बात। भूप मरे रघुपति गये तुम यहि विधि कदरात॥ तुम यहि विधि कदरात अवध उत्पात विचारौ। कालकर्म गति वाम कुदिन सुख कीजिय कारौ॥ कीजिय गुरु आयसु मुदित पुर परिजन शिर भार धरि। पालि शोच सबको हरौ कहत कौशला पाँय परि॥ ९५॥

भरत नयन धारा चली सुनि गुरुजननी वैन। हाथ जोरि बोले मधुर जल उमड़े द्वौ नैन॥ जल उमड़े द्वौ नैन

सीख भलि दीन्ह गोसाईं। मातु कहेउ उपदेश मोहिपर दया सदाईं॥ दया सदाईते कहत सचिव मातु गुरु हित भले। उतर देत पातक लहौं भरत नयन धारा चले॥ ९६॥

पाँयन पनहीं नहिं धरी राम विपिन किय गौन। भूप मरे प्रण पूर करि ताको शोचब कौन॥ ताको शोचब कौन घाव यह तीक्षण लाग्यो। यहै पौर नित दहत रयन भरि शोचन जाग्यो॥ शोचन जाग्यों निशि सबै जाति सबै छाती जरी। राम लषण कटिपट तजे पाँयन पनहीं नहिं धरी॥ ९७॥

प्रातकाल करि हौं यहै सुनहु सत्य सब बात। धर्म जाय जग अयश लहि नरकहु दुख सहिगात॥ नर कहुदुख सहि गात जन्म भरि सङ्कट होई। सब दुख दाँवा दहौं अनल बरु डारहु कोई॥ डारहु कोय जुवाल ज्वर सकल दोष दुख भरि रहै। जाहुँ अनुजयुत बिपिन कहँ प्रातकाल करि हौं यहै॥ ९८॥

शरण सामुहे देखिकै रघुपति करि हैं छोह। शील स्वभाव सुस्वामिको समुहे जनपर मोह॥ समुहे जनपर मोह रामसिय बाम न काहू। मैं शिशु सेवक नीच कुमति उर प्रकटेउँ ताहू॥ प्रकटेउ विधि अघ अयश लै नीच दास शिश लेखिकै। रामसिया करि हैं कृपा शरण सामुहे देखिकै॥ ९९॥

भरत वचन लखि रबि जगे रामबिरह निशि पाय। भूप-मरण कैकय कुमति तिमिर रहेउ पुर छाय। तिमिर रहेउ पुर छाय मुर्छि सोवत नरनारी। लषण सियाको विरह व्याघ्र वृक गर्जत भारी॥ गर्जत भारी भय बिकल तारागण मुनि द्विज लगे। दुखद सेज सोवत बिकल भरत बचन लखि रबि जगे॥ १००॥

सबके मन सब सुख भयो भरत भलो मत कीन। दुख समुद्र बूड़त सकल जेहि अवलम्बन दीन॥ जेहि अवलम्बन दीन सभा सब उठि भे ठाढ़े। रामचन्द्र सिय दर्श मन्त्र नर वारिधि बाढ़े॥ वारिधि बाढ़े लोग सब भरत मन्त्र सबही लयो। साजि साजि वाहन चले सबके मन सब सुख भयो॥ १०१॥

भरत साज साजत भये मातु सकल पुरलोग। चले चित्रकूटहि भरत कृश तन रामवियोग॥ कृश तन रामवियोग चले सजि साज समाजे। पाँयन पनहीं त्यागि शीश नहिं भूषण राजे॥ भूषण साजे त्यागिके भाय मातु सँग सब लये। रामप्रेम पूरण भरे भरत साज साजत भये॥ १०२॥

तमसातीर निवास करि प्रात समाज समेत। सुरसरि देखो जाय तब केवट कहत सचेत॥ केवट कहत सचेत भरत सेना सँग लीन्हे। समुझि निषाद विचारि कपट प्रन्तरमहँ दीन्हे॥ अन्तर कपट विचारिके सजग होउ सब घाट धरि। राम जानि वन भरत सजि तमसातीर निवास करि॥ १०३॥

रामकाज जूझहु सुभट भरत रामके भाय। मैं सेवक रघुवीरको लोहे देहुँ अघाय॥ लोहे देहुँ अघाय सुभट विन कटक निहारौ। हय गय रथ जल बोरि पाउँ पीछे जनि धारौ॥ पाउँ न पीछे कोउ धरहु राम काज अरु गङ्गतट। मोर निहोर विचारिके स्वामि काज जूझहु सुभट॥ १०४॥

पहिरत अगरौ धनु धरत भई छींक गति बाम। सगुन सगुनिया कहि चल्यो सगुन सुमङ्गलधाम॥ सगुन सुमङ्गल-धाम भरत नहिं कपट कुचाली। राम मनावन जाहिं सङ्ग लै मातु सुचाली॥ सङ्ग मातु गुरु सचिव सब लोग राम

शोचनि जरत। सहसा कर्म न कीजिये पहिरत अगरी धनु धरत॥ १०५॥

समुझि भेट नृप लै चले खग मृग धन पट मीन। मिलन साज सब सङ्ग लिय पुरजन परम प्रवीन॥ पुरजन परम प्रवीन मिल्यो मुनिबरकहँ आगे। रामसखा सुनि भरत चले मिलनै रथ त्यागे॥ रथ त्यागे केवट कह्यो नाम जाति पुर जन भले। भरत चल्यो उमँगत नयन समुझि भेटि नृप लै चले॥ १०६॥

भरत कुशल पूँछी सबै केवट बिनती कीन्ह। अब पद रज लखि कुशल सब प्रभु दर्शन जब दीन्ह॥ प्रभुदर्शनके लहत सकल दुख दूरि पराने। चलिये अपने पुरहि राम जस सेवक जाने॥ सेवक कहेउ पुकारि मैं मातुनि लखि सादर जबै। दै अशीष जनु लषण सम हेतु कुशल पूछी सबै॥ १०७॥

सब सुपास सबको भयो सुरसरि भरत अन्हाय। राम-सखा सेवा करी सबको बास दिवाय॥ सबको बास दिवाय रयनि सब तहाँ गवाँई। एकहि खेवा पार किये केवट उतराई॥ उतराई सब सैनयुत चले प्राग मारग लियो। रामदर्श लालच हृदय सब सुपास सबको भयो॥ १०८॥

न्हाय प्रयाग प्रणाम करि दान दीन सुख पाय। भरद्वाज आश्रम गये मिले पूजि बैठाय॥ मिले पूजि बैठाय कह्यो हम सब सुधि पाई। कसन करहु यह भरत प्राणसम प्रिय रघुराई॥ प्राण समान सनेह पद तजि गलानि जनि हृदय धरि। निशि ऋषि कीन सुपास सब प्रात नहाय प्रणाम करि॥ १०९॥

रामनाम रसना ललित ध्यान राम सियरूप। श्रवण कथा रघुपति सगुण हृदय चरित्र अनूप॥ हृदय चरित्र

सनूप परत पग मग डग डोलैं। शिथिल सनेह गँभीर राम सिय सुख भरि बोलैं॥ सुख भरि बोलैं रामसिय पन्थ अपथ्थ निचलित। बर्षत सुर जय जय कहत रामनाम रसना ललित॥ ११०॥

सुन्दर बन गिरि गण मुदित मृग विहङ्ग कपि भाल। प्रमुदित प्रजा समान सब राजा सुखद सुकाल॥ राजा सुखद सुकाल सकल तरु फल सुखदायक। सुधा सरिस सरिवारि कर्म अब औगुणखायक॥ औगुण कुल दल दपट दूरि कपट द्विरद केहरि विदित। केवट भरत बताइयो सुन्दर बन गिरिगण मुदित॥ १११॥

नाथ विटप वट तरु तरे कौन छावनी राम। सिया बनाई वेदिका निज कर ललित ललाम॥ निज कर ललित ललाम राम शुभ आश्रम नीको। मुनिगण कहत पुराण सुनत दिनकरकुलटीको॥ दिनकरकुलमण्डन महो दुख खण्डव कहि जय हरे। रामसिया लक्ष्मण लखो नाथ विटप तरु वट तरे॥ ११२॥

जाय भरत पाँयन परे त्राहि त्राहि भगवन्त। अशरण-शरण प्रताप जग आदि मध्य नहिं अन्त॥ आदि मध्य नहिं अन्त प्रणत जनरक्षक स्वामी। शील स्वभाव विचारि शरण पद रज अनुगामी॥ अनुगामी शिशु औगुणी धाय आनि प्रभु पद धरे। त्राहि त्राहि रक्षक प्रभो जाय भरत पाँयन परे॥ ११३॥

भरत प्रेम रघुबर शिथिल उठे शरीर बिसारि। धनुष तीर पट शिर मुकुट जटा दये छिटकारि॥ जटा मुकुट छिटकारि नयन उमँगे जल धारा। दुहुँ कर लियो उठाय मगन नहिं देह सँभारा॥ देह सँभार विचार तजि भाय लाय

उरमें बिकल। देखि दशासुरगण त्रसित भरत प्रेम रघुबर शिथिल॥ ११४॥

छोड़ि न भावत शिथिल दोउ भाय प्रेम परिपूरि। मन बुधि चित हित लायके करि कुतर्क सब दूरि॥ करि कुतर्क सब दूरि राम पुनि केवट भेटे। लषण भरत पुनि मिले शत्रुहन उर दुख मेटे॥ मेटि दुसह उर दाह दुख भरत शीश पद धरे दोउ। सकल सभा मुनिगण मगन छोड़ि न भावत मगन दोउ॥ ११५॥

केवट गुरु आगमन कहि राम उठे सब सङ्ग। धरे जाय मुनिपदकमल भेंटे मुनि धरि अङ्ग॥ भेंटे मुनि धरि अङ्ग चले आश्रमहि लिवाई। मातन भेंटे आय मनहु शिशुधेनु तुराई॥ धेनु तुराई गति मिली सिय सासुनके चरण गहि। रोदन करत बिलाप करि केवट गुरु नृपमरण कहि॥ ११६॥

भये शुद्ध मुनि वचन कहि भरत राम सब भाय। सब समाज करुणा हरष मातु सचिव ऋषिराय॥ मातु सचिव ऋषिराय भरत विनती उठि कीन्ही। श्रीरघुवर सर्वज्ञ सकल गति मति रति चीन्ही॥ मति गति चीन्हि सनेह सब अवश करिय सोइ आजु लहि। चलिय अवध नृपता करिय भये शुद्ध मुनि बचन कहि॥ ११७॥

आयसु नृप बनको दयो सोई धरि शिर आज। तुमको पितु पुरको दयो पूरण राज समाज॥ पूरण राज समाज हमहुँ तुम आयसु कीजै। पालिय पितुको बैन जन्म अभिमत फल लीजै॥ अभिमत फलति न जग लह्यो पितुआयसु जिन शिर लयो। बचन न खण्डित सो करौं आयसु नृप बनको दयो॥ ११८॥

जो श्रुति कहत सुसत्य है भरत कहत कर जोरि। पितु आयसु शिर राखिये परमधर्म शत कोरि॥ परमधर्म शत

कोरि तदपि पितु तियवश होई। सन्निपात अतिवात वारुणी सेवत सोई॥ सेवत सोई रोगवश वचन कुयोग अपत्य है। समुझि नाथ कीजै उचित जो श्रुति कहै सो सत्य है॥ ११९॥

प्रभुरुख लखि मन प्रण कियो गये गङ्गके तीर। जल उठाय सङ्कल्प करि जो न चलैं रघुवीर॥ जो न चलैं रघुवीर देह तृणसम तजि डारौ। तन मन अर्पित देखि गङ्गतिय वेष सुधारौ॥ वेष सुधारौ एक मुख ढिग उपदेश सुधारियो। सुनु विवेक रामानुजे प्रभुरुख लखि प्रणमन कियो॥ १२०॥

सत्य सच्चिदानन्द हरि राम सकल सुर ईश। ताहि न सुत भ्राता गनौ सर्वोपरि जगदीश॥ सर्वोपरि जगदीश शम्भु विधि हरिकारण कर। पद पताल शिर गगन लोक कर उर गिरि सरवर॥ गिरि सरवर धर अङ्ग सब भरण हरण थिति पूरि भरि। हठन करो आयसु धरो ब्रह्म सच्चिदानन्द हरि॥ १२१॥

जन पालन खलगण दहन चले विपिन सुरकाज। महीदेव श्रुति द्विज विकल मुनिपालन तपसाज॥ मुनिपालन तपसाज जात दश कण्ठहि मारैं। करि प्रमाण निज कर्म अवधपुर तिलक सुधारैं॥ तिलक राज लीला करहि महौ मोद सुख निर्बहन। उठहु राम आयसु करौ सुरपालन खलगण दहन॥ १२२॥

शुभ आनन सुनिकै भरत मगन भये सुख वन्द। भई अदृष्टि अशीश दै श्रवण सुधा शुभ छन्द॥ श्रवण सुधा शुभ छन्द भरत आनन्द सिधाये। औरघुवरपदकमल प्रेम धरि शीश नवाये॥ शीश नाय बिनती करौ देहु पादुका शिर धरत। करत अटन तीरथ विपिन शुभ आनन सुनि सिख भरत॥ १२३॥

मगन समाज समेत सो चित्रकूट बन देखि। सुखद राम बर बदन लखि जीवन सफल विशेषि॥ जीवन सफल विशेषि भरत औराम बुलाये। बिदाहेतु गुरु वचन कहे सबकहँ समुझाये॥ सब प्रबोध भेंटे मिले चले समाज सनेहसों। अवधि आश पुर बास करि मगन समाज सनेहसों॥ १२४॥

राम भरतके प्रेमको को कविबरणत पार। नेम क्रिया दृढ़ धर्म्मव्रत कर्म्म परम आचार॥ कर्म परम आचार वरणि सहसानन हारे। मति जड़ वरणहिं काह मसक नभ अन्त विचारे॥ मशक अन्त किमि पावई गगन उड़ै करि नेमको। तुलसिदास शठ क्यों कहै राम भरतके प्रेमको॥ १२५॥

बसे अवधपुर लोग सब भरत बसे पुर त्यागि। नन्दिग्राम खनि अवनि थल व्रत मुनि निशि दिन जागि॥ निशि दिन मुनि व्रत साधि पादुका नृप करि सेवै। राजकाज शुभ साज करत पूजत द्विज देवै॥ देव मनावत अवधिहित राम समागम होय कब। तुलसिदास मुनि व्रत धरे बसे अवधपुर लोग सब॥ १२६॥

इति अयोध्याकाण्डं
समाप्तम् २॥

अथारण्यकाण्डप्रारम्भः ॥

फटिकशिला सुन्दर सुखद बैठे सिय रघुबीर। सुमन लषण आनहिं सुभग सुरभित सुमुख समीर॥ सुरभित सुमुख समीर राम सिय भूषण साजे। अङ्ग अङ्ग प्रति रुचिर कामरति लखि छवि लाजे॥ लखि लाजे रति काम तन इन्द्र-सुवन भरमैं दुखद। परब्रह्म श्रीराम सिय फटिकशिला सुन्दर सुखद॥ १॥

समुझि मनुज अवगुण कह्यो हल्यो चोंच तन काग। रुधिर देखि शर सुमनको कीन्ह क्रोध करि त्याग॥ कीन्ह क्रोधकर त्याग लोक लोकन भ्रमि आयो। मति गति विह्वल विकल मोह माया भरमायो॥ मोहअन्ध नारद लख्यो पाय सोख पायँन पर्‍यो। त्राहि त्राहि रक्षा करो समुझि मनुज अवगुण कह्यो॥ २॥

एक आँखि करि प्रभु तज्यो कर्म कौन बड़ घोर। कृपा-निधान समानको प्रणतपाल बरजोर॥ प्रणतपाल बर-जोर चरित सुर नर मुनि गावैं। चित्रकूट बस सुखद जानि सब आश्रम आवैं॥ आश्रम विदित विचारिके विपिनसाज सब तन सज्यो। अत्रि जहाँ आश्रम गये चित्रकूटथल प्रभु तज्यो॥ ३॥

ऋषि अनन्द भेंटत भये देखि लषण सिय राम। आसन बैठारे मुदित पूजे अभिमतकाम॥ पूजे अभिमतकाम जानकी लेन लाईं। अनसूया पट दीन नित्य नूतन सुख-

दाई॥ सुखदायन उपदेश दैं पतिव्रत धर्मनि सब दये। आदर अस्तुति मुनि करी ऋषि अनन्द भेंटत भये॥ ४॥

विदा अत्रिसों प्रभु भये सिया लषन रघुराय। चले विपिन आगे सुखद महामुदित मन पाय॥ महामुदित मन पाय सकल मुनि भये सुखारी। निर्भय जप तप करहिं योग मखहोम विचारी॥ होम विचारि सँभारि हरि आशिष आदरसों दयो। मङ्गलमय कानन भयो विदा अत्रिसों प्रभु भयो॥ ५॥

बधि विराध मग सुख भये देखि जाय सरभङ्ग। परिपूरण लखि रामछवि प्रेम प्रफुल्लित अङ्ग॥ प्रेम प्रफुल्लित अङ्ग जोरि हर विनय बड़ाई। करि निहोर रचि चिता अगि चढ़ि दीन लगाई॥ दीन अगि तन अर्पिके राम लषन सिय उर लये। गयो धाम श्रीराम लखि बधि विराध मग सुख भये॥ ६॥

मिले सुतीक्षण धायके पुलकनयन जलधार। जेहि विधि शिव योगीश मुनि ध्यावत हृदि आगार॥ हृदि मन्दिर ध्यावत सदा आये लेवन आजु हैं। देखों नयन सनेह भरि मूरति सुख रघुराज हैं॥ अन्तर्यामी धारि मन मूरति नेह लगायके। राम जगाये प्रेम परि मिले सुतीक्षण धायके॥ ७॥

सङ्ग गयो मगमें चल्यो जात लखत प्रभु रूप। ऋषि अगस्ति आश्रम गये हर्षि सकल सुर भूप॥ हर्षि देखि सुर भूप मिले मुनि भाग बखान्यो। आसन आदर पूजि वेद प्रति मति प्रभु जान्यो॥ जान ठानि सुख मानि प्रभु मधुर वचन बोल्यो भल्यो। शुभ अस्थान बताइये सङ्ग गयो मगमें चल्यो॥ ८॥

अमङ्गल सुखमई। खरदूषण पहँ गय विकल हास समुझि धावत भई १३ ॥

करि प्रबोध सेना सजी खरदूषण मन क्रोध। राम बुझाये लषणको सिय गिरि राखिय शोध॥ सिय गिरि राखो शोधि दनुजसेना यह आई। भानुयान छपि गये धूरि नभमण्डल छाई॥ छाय धूरि नभमें रही दुन्दुभि दीरघ अति बजी। सीतहिं राखो कन्दरा करि प्रबोध सेना सजी॥ १४॥

धरहु धाय बोले वचन लखि छबि दूत पठाय। नारि अग्र करि मिलहु नृप कहे दूत यह आय॥ कहे दूत यह आय राम तेहि उत्तर दीन्हो। सुनि खरदूषण क्रोध सुभट लै दर्पित कीन्हो॥ दर्पित डारहिं अस्त्र बहु धरि सशूल असि शक्ति घन। मनहु मेघ वर्षत अचल धरहु धाय बोले वचन॥ १५॥

राम साजि शारङ्ग शर चले विशिख जनु व्याल। कटे विकट खल उर अरुं भुज महि गिरहिं कपाल॥ भुज महि गिरहिं कपाल विकल भाजहिं लखि शायक। खलदल सभय सशोक निरखि खरदूषण धायक॥ धाय क्रोधि शायक तजे रहे पूरि दिशि गगन धर। सजि पावकशर जारि तम राम साजि शारङ्ग शर॥ १६॥

खलदल वृन्द निहारिकै प्रभु मन कीन विचार। रामरूप कीनो कटक सब लरि मर्यो अपार॥ सब लरि मर्यो अपार एक एकन धरि मारैं। कौतुक लखि सुर गगन रामको चरित निहारैं॥ चरित निहारि पुकारि सुर वर्षि प्रसून सुधारिकै। जय जय जय महिभारहर खलदल मरन निहारिकै॥ १७॥

खरदूषण शिशिरा परे शूर्पणखा लखि नैन। रोवत रावणकी सभा कहि कहि आरत वैन॥ कहि कहि आरत वैन देशकी सुरति बिसारी। शिर अरि डेरा करयो खबर

नहिं तोहिं सुरारी॥ खबरि न तोहिं निहारु मोहिं अङ्ग सकल शोणित भरे जुरे जाय भ्राता समर खरदूषण चिशिरा परे॥ १८॥

ताहि सङ्ग बरभामिनी रतिरम्याछवि छीन। रमा भारती शिवतिया लागहिं सकल मलीन॥ लागहिं सकल मलीन कोटि शशिसम द्युति शोभा। खग मृग पशु जड़ जीव वाहि लखि विकल न को भा॥ विकल नारि नर मुनि मगन तजत योग जप यामिनी। दामिनि बरणत द्युति कहां ताहि सङ्ग बरभामिनी॥ १३॥

अवनि असुर खण्डित करैं प्रबल शत्रु वरिबण्ड। देखत बालक काल सम अति विशाल भुजदण्ड॥ अति विशाल भुजदण्ड मदन जनु वेष सँवारैं। मुनि मन भये अनन्द विपिन विचरत भय डारे॥ भय डारे मुनि जय करहिं खल-दल दलि सुर दुख हरैं। भूपकुमार अपार छवि अवनि असुर खण्डित करैं॥ २०॥

करि प्रबोध रथ चढ़ि चल्यो रावण मन अनुमानि। जहँ मारीचस्थान शुभ मन्त्र तन्त्र मन ठानि॥ मन्त्र तन्त्र मन ठानि गयो उठि आदर कीन्हो। मारीचहु मन लख्यो कछू स्वारथ मन दीन्हो॥ स्वारथ घाते बिचारि जिमि अङ्कुश धनु अहि छल छल्यो। नवै बिलारि विचारि छल करि प्रबोध रथ चढ़ि चल्यो॥ २१॥

तात हेतु स्वारथ करौ कथा समस्त सुनाय। हरहुँ बाम नृप तनयकौ बैर सकल बुझि जाय॥ बैर सकल बुझि जाय होउ मृगकपट बनाई। भगिनी लखि दुख मोहि करहु बन मोरि सहाई॥ मोरि सहाय विचारिकै निज कुल मङ्गल मन धरौ। बात जात घातक भयो तात हेतु स्वारथ करौ॥ २२॥

सुनु सुत याहि न नर गनौ मैं जानत बल ताहि। बिन-फरशर मोहिं मारियो गयों समुद निरवाहि॥ गयों समुद निरवाहि मारि ताड़का सुबाहौ। भञ्जो शिवको दण्ड जनक-कन्यका बिवाहौ॥ जनकसमाज कृपाल बहु मान मर्दि भृगु-पति हनौ। ताहि बिरोध न कुशल है सुनु सुत ताहि न नर गनौ॥ २३॥

ज्ञान सिखावत मोहिंकहँ मैं सुर नर वश कीन। उत्तर देहि न उठि चले डरडरात पुरतीन॥ डरडरात पुरतीन समुझि मन देखि बिचारी। यहि मारे बल नरक राम कर सुरपद भारी॥ सुरपद भारी पाय हौं चल्यो नाय शिर राम तहँ। रावण आतुर चढ़ि चल्यो ज्ञान शिखावत मोहि-कहँ॥ २४॥

मायामय छाया करौ सिय आयसु उर मानि। मृग देख्यो शुचि हेममय खचित रतन मणिखानि॥ खचित रतन मणि-खानि लखत जानकी सुखारी। यहि हति सुन्दर छाल करिय प्रभु धनुशरधारी॥ धनुशरधारी मन समुझि जानत आगमकी घरी। चले लषण सिय सौंपिकै मायामय छाया करी॥ २५॥

मृग मारयो दूरी निकरि राम कठिन शर तानि। हा लक्ष्मण प्रथमै कह्यो पीछे राम बखानि॥ पीछे राम बखानि कहत जानकी बिचारी। कही लषणसों बात आय तव सङ्कट भारी॥ सङ्कटवश सुमिरत तुम्हैं जाहु तुरत धनुबाण धरि। असुरसैन्य अरिदल यसे मृग मारयो दूरी नि-करि॥ २६॥

राम न सङ्कट कहुँ परै काल जुरै रणमाहिं। सकल सुरा-सुर लरि मरैं समर जीति हैं नाहिं॥ समर जीति हैं नाहिं

सोच मनमांझ निवारौ। राम दीनता वचन वदन कबहूँ न उचारौ॥ कबहुं न संशय आनिये सत्य वचन मेरे धरौ। छली वेष निशिचर विपिन राम कबहुं सङ्कट परौ॥ २७॥

कह्यो वचन सहि नहिं गयो उठ्यो रेख धनु खाँचि। यती-वेष दशकण्ठ शठ आयो सियढिग याँचि॥ आयो सिय-ढिग याँचि जानकी ताहि बुलायो। देन लागि फल मूल दुष्ट तब वचन सुनायो॥ वचन सुनाय सुखद कहि बँधी भीख नहिं कहूँ लयो। भावीवश सिय रेख तजि वचन कह्यो नहिं सहि गयो॥ २८॥

रेख त्यागि सिय जब गई रथपर लई चढ़ाय। गल्यो गगन भयते मगन इत उत देखत जाय॥ इत उत देखत जाय सिया रावण जब जान्यो। कहत पुकारि कृपाल नाथ कहुँ दूरि परान्यो॥ दूरि परान्यो लषण कहँ मोहिं दशानन हरि लई। परी विवश दशकण्ठके रेख त्यागि जब सिय गई॥ २९॥

राम राम कहि खग चल्यो गृध्र जटायू देखि। रोक्यो रथ रघुवरतिया दशशिर हरी विशेखि॥ दशशिर हरी विशेषि मारि रथ भूतल डार्यो। सीतहि लई छुड़ाय विकल दशशिर महि पार्यो॥ दशशिर पार्यो भूमितल छत्र चूर उर थल हल्यो। मुकुट अस्त्र शस्त्रहि दपट राम राम सुनि खग चल्यो॥ ३०॥

अति रिस रावण रण रच्यो तीक्षण काढ़ि कृपान। दल्यो पक्षमहि खग गिर्यो कहि सुख कृपानिधान॥ कहि सुख कृपानिधान साजि स्यन्दन सिय लीन्हौं। लै नभपथ फिरि चल्यो गीध विह्वल गति कीन्हौ॥ विह्वल गति कपि सिय

लखे नूपुर दै कपि कर सच्यो। तरु अशोकतर राखिक अति रिस रावण फिरि रच्यो॥ ३१॥

लषण बात नौकौं नहीं बन सिय आये त्यागि। असगुन अम मन होत अति सिय बिन उर बिरहागि॥ सिय बिन उर बिरहागि लषण पद गहि समुझाये। शोचत आश्रम देखि नयन उमड़े जल छाये॥ उमड़े जल छाये बिकल खोजत गिरि वन सर मही। रुधिर धनुष आगे परयो लषण बात नौकी नहीं॥ ३२॥

राम राम रसना रटै लख्यो गीधपति जाय। कही कथा सिय हेतु गति रामनयन जल छाय॥ रामनयन जल छाय गोद धरि बचन उचारे। परमारथ तुम तात प्राणधन तृण करि डारे॥ तृण समान प्राणनि दयो कोपरहित रण-महँ कटै। जियो भोग भोगो जगत राम राम रसना रटै॥ ३३॥

दर्शलागि जीवन रहेउ भाग उदय रघुराय। जेहि बिरञ्चि शिव सेवहीं लियो गोदमोहि आय॥ लियो गोद मोहि आय राम कहि प्राण गँवाये। भयो तुरत हरिरूप चारि भुज अस्त्र सुहाये॥ अस्त्र सबै शिर मुकुट वर पीताम्बर भूषण गहेउ। जोरि पाणि अस्तुति करत दर्शलागि जीवन रहेउ॥ ३४॥

परमधाम गो गीधपति क्रिया कीन्ह श्रीराम। चले बिरहअङ्कुर भये बिपिन शबरीधाम॥ बिपिन शबरीधाम अर्घ आसन सब साजे। धूप दीप फल सुजल धरे रघुपति-के काजे॥ सब सप्रेम पायन परी दर्श पाय पावै न गति। राम तुम्हारे रूप लखि परमधाम गो गीधपति॥ ३५॥

काठ साजि रचिकै चिता सिय सुधि कही बहोरि।

शवरी जरि सुरगति गई क्रिया करी प्रभु कोरि॥ क्रिया करी प्रभु कोरि चले बन दोनौ भाई। मुनिगण मिलत अनेक दर्श अभिमतफल पाई॥ पावहि अभिमत जीव जड़ करहिं योग जेहि प्रभु निता। साजि साजि सुरगति लही काठ शावरी रचि चिता॥ २६॥

रामसिया खोजत गये पम्पा सुभग तड़ाग। सुन्दर जल तरु बिहँग मृग मुनिगण सदन सुवाग॥ मुनिगण सदन सुवाग करत जप तप मन लाई। देखि सरोवर मुदित कौन मज्जन रघुराई॥ रघुराई मज्जन करयो नारद मुनि आवत भये। तुलसिदास सुर सुभग सर रामसिया खोजत गये॥ ३०॥

इति अरण्यकाण्ड समाप्तः॥

अथ किष्किन्धाकाण्ड प्रारम्भ।

चले बिपिन लक्ष्मण सहित मिले पवनसुत आय। बिप्र रूप पूछत भयो को तुम कहो बुझाय॥ को तुम कहो बुझाय बिपिन सुकुमार सलोने। नृप दशरथके सुवन तासु आयसु तजि भौने॥ तजेउ भवन आये बिपिन नारि गई शोध न लहत। खोजत हम द्विज कवन तुम चले बिपिन लक्ष्मण सहित॥ १॥

लै सुग्रीव मिलाइयो प्रभु गुण मन अनुमानि। कही कथा सब परस्पर नूपुर दये बखानि॥ नूपुर दये बखानि राम लोचन भरि आये। विरह विकल प्रभु देखि कीश बहु विधि समुझाये॥ समुझाये सुग्रीव अति राम लषण सुख पाइयो। प्रभु भेंटे हनुमन्त उर लै सुग्रीव मिलाइयो॥ २॥

प्रभु बोले कारण कवन बसत विपिन कपिराज। कथा कही सब बालिकी कोपि कहा रघुराज॥ कोपि कहा रघुराज बालि एकहि शर मारौं। सम्पति ऋषि तिय सहित तोहि कपि तिलक सँवारौं॥ तिलक सँवारौं कालहि नहिं किष्किन्धा नृपता भवन। तौ न धनुष शर कर धरौं मित्र करिय कारण कवन॥ ३॥

तब सुग्रीव दिखाइयो बालि महा बल बीर। गर्जि नगर जान्यो सबहि चल्यो क्रोधि रणधीर॥ चल्यो क्रोधि रणधीर लरे पुनि दूनौ भाई। शरणागत प्रण समुझि बाण मार्‍यो रघुराई॥ मार्‍यो बाण प्रमाण करि गिर्‍यो अवनि मुरझाइयो। रामरूप लोचन पुलकि तब सुग्रीव दिखाइयो॥ ४॥

श्याम रामछबि उर धरी बाणी कहत कठोर। नर गति हरि गति तजि दई सम प्रकाश सब ठौर॥ सम प्रकाश सब ठौर जगत अप्रिय कछु नाहीं। जो अप्रिय तब होय सकल दुक सङ्ग बिलाहीं॥ सङ्ग रङ्ग नहिं चाहिये बिधि पिपील रचना करी। जयति हरे श्रीराम कहि श्याम रामछबि उर धरी॥ ५॥

प्राण गये श्रीराम कहि नारि विकल पुरलोग। सुग्रीवहि आयसु दयो करहु मृतककर योग॥ करहु मृतककर योग लषण सबको समुझायो। राज हेतु सुग्रीव अनुज सँग नगर पठायो॥ नगर बुलाये द्विज सकल अङ्गदादिकपि बोध

लहि। बालिशोच दूषण हरौ प्राण गये श्रीराम कहि॥ ६॥

रामनाम कहि नृप करौ तिलक सारि शिरताज। राम कृपानिधि जगतमें बिरद गरीबनिवाज॥ बिरद गरीब-निवाज कियो सुग्रीव सुखारौ। गिरिबन बिकल बिहाल बालि डर कम्पित भारौ॥ कम्पित डर निरभय नहीं जात दुसह ज्वर उर जरयो। धाम बाम नृप यामको रामनाम कहि नृप करयो॥ ७॥

राजनीति कहि प्रभु रहे शैलप्रवर्षण आय। अनुज सहित सुन्दर सदन राखे देव बनाय॥ राखे देव बनाय निरखि वर्षाऋतु आई। घनघमण्ड नभ घोरं मनहु रविपर निशि धाई॥ निशि धाई रवि भजि गये नीरबुन्द बाणन गहे। तड़ित कृपाण सुइन्द्रधनु राजनीति कहि प्रभु रहे॥ ८॥

करि मनोज डेरा जगत सजि आयो करि सैन। असित पीत सित घन अरुण तनि बितान सुखचैन॥ तनि बितान सुख चैन तड़ित ध्वज सुन्दर राजै। निशि दिन घन घह रात मनहु बर दुन्दुभि बाजै॥ दुन्दुभि बाजै मोर पिक बक दादुर बन्दी लगत। बिरहवन्त कारण सज्यो करि मनोज डेरा जगत॥ ९॥

सुरपतिके गिरिगण ग्रसे बुन्दबाण अरिलाय। कहुँ कहुँ मारत बज्रशर घनगज शीश चढ़ाय॥ घनगज शीश चढ़ाय मोर हर बल पुर आये। बाजे नौबति जोति कोकिला सुयश सुनाये॥ सुयश जनाव बितान तनि बेलि बिटप गृह गिरि बसे। मुद्रित करि पाषाण जड़ सुरपतिके गिरिगण ग्रसे॥ १०॥

कै समुद्र महिपर चढ़यो महि मुद्रित कर [illegible]। सर सरिता जलदल परे शरपञ्जर महि कीन॥ शरपञ्जर महि

कौन तड़ित बड़वागिनि मानो। बर्षत नभ चढ़िवारि त्रसित गिरि दिग्गज जानो॥ दिग्गज कम्पहि घन सदल नाद बाद दशदिशि बढ़्यो। कम्पमान महि गहि धरी कै समुद्र महिपर चढ़्यो॥ १२॥

शरदभूप आयो मिलन धवल रूप द्युति साजि। कमल कोक खञ्जन चतुर दूत उठे जग बाजि॥ दूत उठे जग बाजि चन्द्र जनु छत्र सुहायो। सरि सर निर्मल बारि पाँवड़े पावस नायो॥ पावस दीन्हो तिलक जग शरदराज राजत थलन। पावस गयो प्रणाम करि शरदभूप आयो मिलन॥ १२॥

सीय शोध अब लीजिये जाहु जहाँ कपिराज। खबरि बिसारो सुख सुपुर पाय नारि धन राज॥ पाय नारि धन राज बालि थल तुम्हैं पठाऊं। कर धरि कीनो सखा ज्ञान दै मन समुझाऊँ॥ मन समुझाय समेत कपि आप गमन पुर कीजिये। बानर भाल पठाय करि सियाशोध अब लीजिये॥ १३॥

लक्ष्मण चले लिवायकै प्रीति प्रबोध रिसाय। बानर भालु बुलायकै गये जहां रघुराय॥ गये जहां रघुराय मिले पाँयन कपि नाये। रघुपति हँसि मृदु प्रकृति पुलकि गहि कण्ठ लगाये॥ कण्ठ लगाय बुझाय कपि विनय करो चित लायकै। बानर भालु बिशाल भट लक्ष्मण चले लिवायकै॥ १४

कपि लक्ष्मण सबसों कहेउ सिय सुधि खोजहु जाय। पाख दिवस बिन सुधि लिये हमहि मिल्यो जनि आय॥ हमहि मिल्यो जनि आय बहुरि अङ्गदहि बुलाये। तुम मारुत-सुत साथ जाहु दक्षिण शिरनाये॥ दक्षिण सिय शोधहु सुभट भालु नील नल सुख लह्यो। मुँदरी दै हनुमन्तको प्रभु कपि लक्ष्मण सब कह्यो॥ १५॥

चले सुभट व्यङ्कट बिकट खोजत गिरि सर खोह। राम-काज लवलीन मन बिसर्यो तनकर छोह॥ बिसर्यो तनकर छोह सघन बन जाय भुलाने। तृषावन्त भे बिकल बिना जल सब अकुलाने॥ अकुलाने हनुमन्त लखि चल्यो ववर पैठ्यो सुभट। कथा सुनाई शशि प्रभा चले सुभट व्यङ्कट बिकट॥ १६॥

जल फल खाय प्रणाम करि तेहि पठये जलतीर। सोस प्रेम पहुंचो तहां लक्ष्मण श्री रघुबीर॥ श्रीरघुकुलमणि बीर पठै बदरीबन दीन्हो। कपि सब सागरतीर सीय हित चिन्ता कीन्ही॥ चिन्ता कीन्ही कपिन सब सम्पाती लखि कहत डरि। धन्य जटायू सुभटको जल फल खाय प्रणामकरि॥ १७

सुनि सब कथा प्रणाम करि गये मुदित सम्पाति। भये पच्छ जल दीन शुचि कही पच्छ गति भांति॥ कही पच्छ गति भांति धरहु धीरज सब भाई। पैहौ सीतहि तबहिं पार सागर जो जाई॥ सागर शत योजन उलघि प्रबल बीर जाइहि जो परि। सो सिय पावहि सत्य सुनि कपि सब कथा प्रणाम करि॥ १८॥

गयो कहत यह गीधपति कपि सब करत बिचार। बहु रत संशय जिय कहैं अङ्गद जातो पार॥ अङ्गद जातो पार कहत कच्छेश बढ़ाई। नल औ नील सकोच जानकी कौन दिखाई॥ कौन दिखाई जानकी पुनि प्रचारि कह कच्छ-पति। कहा समुद हनुमन्त तोहिं गयो कहत यह गीध पति॥ १९॥

इति श्रीकिष्किन्धाकाण्ड समाप्तः।

अथ सुन्दराकाण्ड प्रारम्भ।

भयो हेमगिरिको शिखर सुनत ऋक्षपति बयन। चढ़्यो तमकि भूधर अधर फरकि अरुण करि नयन॥ अरुण नयन भुजदण्ड मसकि भूधर जब चंप्यो। जल पतालको कढ़्यो शेषकच्छपपर कम्प्यो। कम्पि शेष शिरनमि गयो कूदि चल्यो बलवन्त फिरि। मारि दुष्ट गिरि परसि पग भयो हेमगिरिको शिखरि॥ १॥

पटकि लङ्किनी बामको पैठ्यो सिय हित बीर। लखो न पुर सिय घर घरन खोजि श्रमित रणधीर॥ खोजि श्रमित रणधीर बिभीषण भेद बतायो। गयो बाटिका सिय तहाँ पुनि रावण आयो॥ रावण आयो देखि कपि तरु बैठो विश्रामको। कहे बचन रावण सुने पटकि लङ्किनी बामको॥ २॥

सिय उत्तर ताको दयो गयो सदन मतिमन्द। सिय दुख लखि है मुद्रिका देखी मारुतनन्द॥ देखी मारुत नन्द जानकी कथा सुनाई। मातु धरिय मन धीर कह्यो निज मुख रघुराई॥ रघुराई आवन चहत कीशकटक दलबल भयो। सुत समान तेरो कटक सिय उत्तर ताको दयो॥ ३॥

राम प्रताप सँभारिकै भयो हेमगिरि रूप। रघुबर कृपा बिचारु तृण होय बज्र अनुरूप॥ होय बज्र अनुरूप सर्पशिशु गरुड़हि मारै। तिमिर खाय शशि रविहि मशक गिरि हेम उखारै॥ मशक सुमेरु उखारही समुद पिपील निवारिकै। जरो जगत खद्योत तव रामप्रताप सँभारिकै॥ ४॥

बूड़ि जायँ खर कुम्भजो शेष डारि महिभार। बारि खाय बड़वानल अम्बुचन्द्र शिर डार॥ अम्बुचन्द्र शिर डारि चारि-मुख सृष्टि नशावै। गिरि सर सागर डारि धरणि तजि धीरज धावो धीरज धरणी उर तजै जलहि मिलै गिलि द्वंद्वजो। राम-बाण खल ना बचै बूड़ि जायँ खुर कुम्भजो॥ ५॥

मातु देहु आयसु मुदित लखौं वाटिका जाय। सुन्दर फल लागे विटप भोजन करौं अघाय॥ भोजन करौं अघाय जानकी उत्तर दीन्हो। सुत रखवारे प्रबल पवन परवेश न कीन्हो॥ पवन शूर परवेश नहिं लखि न सकहिं रवि शशि उदित। कह कपि यह भय तनक नहिं मातु देहु आयसु मुदित॥ ६॥

करि प्रणाम कूद्यो सुभट लग्यो फूल फल खाय। मूल चलावै समुदमहँ रक्षक पहुँचे जाय॥ रक्षक पहुँचे जाय मर्दि महि गर्द मिलाये। पुरी परो अतिशोर अक्ष रावण पठवाये॥ अक्ष वृक्ष लै कपि हन्यो मेघनाद आयो निकट। भिरे प्रबल रघुपति सुमिरि करि प्रणाम कूद्यो सुभट॥ ७॥

ब्रह्मबाण कपि साधिकै धरि लै गयो बहोरि। रावण आगे करि दियो कहि कटु बचन करोरि॥ कहि कटु बचन करोरि कहो रावण तब बानी। को मर्कट दूत कहाँ काहि बल फलकर हानी॥ फल दल मूल विध्वंसि करि रण कीन्हो अवराधिकै। कहि कपि तव सुत छल करो ब्रह्मबाण कर साधिकै॥ ८॥

विधि हरि हर दिगपाल सब व्याल यक्ष गन्धर्व। पितृ प्रेत पशु मनुज जग सचराचर सुर सर्व॥ सचराचर सुर सर्व गगन धरणी गिरि घेरे। मैं तैं पुर परिवार धाम धन तिय सुत तेरे॥ तिय सुत तेरे लोक सब भये रहे पुनि होहिं

अब। तासु दूत जेहि जग सृज्यो विधि हरि हर दिग्पाल सब ॥ ९ ॥

अति रिस पावक बारिके तेल बस्त्र घृत बोरि। चढ़्यो अटारीकनककी विधिशर करते तोरि॥ विधिशर करते तोरि सकल पुर दीन्हो आगी। क्षण महँ सब पुर बारि बिभीषण भवन न लागी॥ भवन भस्म भूषण भये समुद सुदर्प निवारिके। सिय मणि लै कूदत भयो अति रिस पावक बारिके॥ १० ॥

करि प्रबोध साथी सकल मधुवनके फल खाय। हर्षि गहे प्रभुपदकमल उर भेंटे रघुराय॥ उर भेंटे रघुराय दीन्ह मणि प्रभु हँसि लीन्ही। सियदुर्दशा निहारि पवनसुत प्रकटित कीन्ही॥ प्रकटित कीन्ही सियदशा सुनत हाल रघुपति बिकल। बिजय करिय सिय आनिके करि प्रबोध साथी सकल॥ ११ ॥

रामबचन कपिदल चल्यो दिग्गज अहि सकुचन्त। आलु बली मर्कट सुभट यूथ यूथ बलवन्त॥ यूथ यूथ बलवन्त अन्त को पावहिं लेखा। राम कटकको विभव रूप जानहिं जिन देखा॥ जिन देखा ते जानहीं नभ अहि पुर भूतल हल्यो। समुद तीर डेरा परे रामबचन सुनि दल चल्यो॥ १२ ॥

बचन सुनत रावण कह्यो मन्त्री मित्र बुलाय। मन्त्र कहो पूछत सबहि कह्यो विभीषण आय॥ कह्यो विभीषण आय मन्त्र मणि मानिय मेरो। सीतहि सौंपहु जाय मिलहु रघुनाथ सवेरो॥ सुनि गुनि उठि लातन हल्यो मिलहि शत्रु को उर दह्यो। चल्यो हृदय अनुमान करि बचन सुनत रावण कह्यो॥ १३ ॥

मन गलानि हरिहै कवन चल्यो ताकि प्रभु पांय। दीन

बन्धु दाया हृदय लीन्हे तुरत बुलाय॥ लीन्हे तुरत बुलाय तिलक पुनि निज कर सारयो। रावण पुर सब दियो मिल्यो जब शीश उतारयो॥ शीश उतारे शिव दयो तब पाये लङ्का भवन। सो पुर धन पांयन परत मन गलानि हरि है कवन॥ १४॥

सखा निकट बैठारिके पूछो सागर पाय। केहि विधि उतरै कपिकटक तेहि विधि करिय उपाय॥ तेहि विधि करिय उपाय मन्त्र करि व्रत तट कीन्हो। क्षुद्र न द्रवहिं विशेषि तबहिं प्रभु धनु शर लीन्हो॥ धनु शर उर मारयो विकल मिल्यो रत्न ले आयके। पथ्य देहि कपिकटककहँ सखा निकट बैठायके॥ १५॥

नाथ सुगम मारग रच्यो जल महि पावक पौन। विटप शैलसर जड़ रचे इनको सिखवत कौन॥ इनको सिखवत कौन करहु प्रभु एक उपाई। गिरिगण बाँधहिं सेतु नील नल दूनहुँ भाई॥ दूनहुँ भाई बाँधि हैं शैल सकल मर्कट सच्यो। आपु प्रताप सहाय मम नाथ सुगम मारग रच्यो॥ १६॥

सुनि साँचे सागर वचन कपिपति कीश बुलाय। धावहु गिरि तरु आनिके नलहि देहु सुख पाय॥ नलहि देहु सुख पाय धरहिं गिरि सागरमाहीं। सुनि आयसु कपिवृन्द चले चहुँ दिशि भ्रम नाहीं॥ भ्रम नहिं शिर वङ्गुल करहिं कोटि कोटि गिरि धरि रचन। देहिं आनि नल नीलकहँ सुनि साँचे सागर वचन॥ १७॥

इति सुन्दराकाण्ड समाप्तः॥

हारि गये दल बल असुर चल्यो बालिसुत बीर। मुक्कट धरे प्रभु पाँयतर मिले हर्षि रघुबीर॥ मिले हर्षि रघुबीर बालिसुत कारण भाख्यो। गढ़ घेरयो करि मन्त्र जहां लायक तेहि राख्यो॥ राखि वीर पुर भयो दयो लङ्क अति प्रबल जुर। भयो युद्ध क्रुद्धित समर हारि गये दल बल असुर॥ ५॥

मेघनाद योधा सुभट लक्ष्मण हन्यो विचारि। अर्द्ध मूरछा प्रभु लखे हनुमत लीन प्रचारि॥ हनुमत लीन प्रचारि औषधी लेन पठायो। दुष्ट हन्यो कपि बीच शैल शिर राखि सिधायो॥ शैल शीश देखन भरत तानि मारि शायक विकट। राम कहत भेंटन कह्यो अनुज आय पीड़ा सुभट॥ ६॥

अति सनेह भेंट्यो भरत कह्यो कीश चहुपास। विस-म होहि मारण अनुज पठवौं तोहि प्रमाण॥ पठवहुँ तोहि प्रमाण समुझि पुनि कहत कपीशा। तव प्रतापते जाय जाउँ जहँ प्रभु जगदीशा॥ प्रभु जगदीश विचारिके दोउ पग धरि पायन परत। धन्य धन्य हनुमन्त जग अति सनेह भेंट्यो भरत॥ ७॥

लक्ष्मण उठि ठाढ़े भयो कीन्हो वैद्य उपाय। सुनि रावण संशय भयो आता जाय जगाय॥ आता जाय जगाय कहे कारण सब जेते। तेहि तव कह्यो न मनुज ब्रह्म प्रभु कपि सुर तेते॥ कपि सुर रघुवर ब्रह्म हैं तेहि विरोध को नहिं गयो। यह कहि रण मण्डल गयो लक्ष्मण उठि ठाढ़े भयो॥ ८॥

मारि दुष्ट रण दलिमले सुर दुन्दुभी बजाय। लक्ष्मणको आयसु दियो तात लङ्कपुर जाय॥ तात लङ्कपुर माहिं हतहु रावण सुत जाई। आयसु शिर धरि लषण हत्यो देवन दुख-

दाई॥ दुखदाई मारे सकल रावण मन शोचत चले। जय जय रघुवंशमणि मारि दुष्ट रण दलमले॥ ९॥

रण रावण आतुर चल्यो असुरसेनदल साथ। करत युद्ध देवन डरत धरत शरासन हाथ॥ धरत शरासन हाथ चलत महि दिग्गज डोलैं। क्षुभित उदधि जल शृङ्ग शैल खसि महिधर बोलैं॥ महिधर बोलैं अति सभय रवि मुद्रित सब थल हल्यो। भुज प्रचण्ड रण मण्डियो रावण रण आतुर चल्यो॥ १०॥

श्रीरामरावणयुद्धको को कवि पावहि पार। शेष शारदा निगम बिधि शङ्कर मुनि अवतार॥ शङ्कर मुनि अवतार कल्प कोटिन कहि हारैं। बल दल समर प्रचण्ड मन्द जे कहन बिचारैं॥ कहन बिचारैं मति कवन सब कहि हारे बुद्धको। तुलसिदास सो किम कहै रामरावणयुद्धको॥ ११॥

प्रभु मारयो प्रभु ह्वै गयो ताको बरणै कौन। बल पौरुष अरु बीरता जानत रवि शशि पौन॥ जानत रवि शशि पौन बड़ो रण रावण कीन्हो। निज दल सम गति ताहि पर्मपद पावन दीन्हों॥ पावन पद लखि देव सब पुष्प वृष्टि दुन्दुभि दयो। करहिं विनय सादर सकल प्रभु मारयो प्रभु ह्वै गयो॥ १२॥

सियसङ्कट दूरी करयो राज बिभीषण दीन। सत्य सुयश कपिको कह्यो शपथ सीय शुचि कीन॥ शपथ सीय शुचि कीन चढ़े पुष्पक रघुराई। कपि सिय लषण समेत चले सुर जयति सुनाई॥ जय जय प्रभु खलदल दल्यो सुर मुनि द्विज महि दुख हर्यो। अमर नाग भूतल सुखी सियसङ्कट दूरी करयो॥ १३॥

पूजा शङ्करकी करी सेतु सिया दरशाय। पञ्चबटी कुम्भ-जहि मिलि अत्रि आदि ऋषिराय॥ अत्रि आदि ऋषिराय मिले अनसूयहि जाई। आशिष आयसु पाय चले आगे रघुराई॥ रघुराई आये तहाँ चित्रकूट मङ्गल घरी। पै-अन्हाय मुनिगण मिले पूजा शङ्करकी करी॥ १४॥

आयसु पायो मुनि दयो चले हर्षि श्रीराम। यमुनहि पूजि सप्रेममय प्रभुदित कीन्ह प्रणाम॥ कीन्ह प्रयाग प्रणाम मिले मुनिगण प्रभु जाई। करि मज्जन सिय सहित विप्र मान्यता बड़ाई॥ मान बड़ाई पूजिकै पुनि विमान आतुर गयो मिले निषादहि गङ्गतट आयसु पायो मुनि दयो॥ १५॥

कपि हनुमन्त पठाइयो भरत कुशलता देखि। आवत सिय लक्ष्मण सहित यह तुम कहौ विशेषि यह तुम कहौ विशेषि प्रातउठि भरत निहारौं। पुरवासि न पुनि मिलौं मातुको शोच निवारौं॥ शोच निवारौं अवधको सब प्रकार समुझाइयो। भरत प्रबोधन हेत प्रभु कपि हनुमन्त पठाइयो॥ १६॥

पुनि निषाद उर लाइयो रघुपति करुणापुञ्ज। ले आयो मन्दिर परम सुजल धोय पदकञ्ज॥ सुजल धोय पदकञ्ज रुचिर आसन बैठाऱ्यो। धूप दीप नैवेद्य फूल फल अङ्कुर धाऱ्यो॥ अङ्कुर खाये प्रेम युत राम बहुत सुख पाइयो। प्रात समाज विमान चढ़ि पुनि निषाद उर लाइयो॥ १७॥

भरत देखि हनुमन्त जब कृश शरीर दुख दीन। जटा शीश मुनिव्रत धरम प्रेम पाँवरी लीन॥ प्रेम पाँवरी लीन राम सिय वदन उचारो। कुश आसन आसीन बसन भूषण तजि डारो॥ भूषण तजि भजि नाम प्रभु अवधि अन्त दिन आहि रव। अहह मोहि धिक धिक कहत भरत देखि हनुमन्त जब॥ १८॥

सुनहु भरत हनुमत कहो आय लखन सिय राम। समेत मङ्गल कुशल जीति असुर संग्राम॥ जीति असुर संग्राम देव सब स्वबल बसाये। राज विभीषण दीन्ह सुयश नारद शिव गाये॥ नारद शारद शेषु शुक प्रभु कीरति पावन लही। सो प्रभु आवत अवधपुर सुनहु भरत हनुमत कही॥ १९॥

सुनत भरत आनँद लह्यो पर्म भावती बात। चकित थकित सुख सपनहीं कहत कोई साचात॥ कहत कोई साचात भरत पुनि नयन उघारे। पुनि हनुमत कह राम अवध आये सुखभारे॥ सुखभारे उठि भरतकर हिये भेंटि आनँद गह्यो। अश्रुपात पातन पुलकि कुशल भरत आनँद लह्यो॥ २०॥

आये यह सन्देश ले कहा देहुँ तोहि लाल। यहि पटतर त्रयलोक नहिं कहौ अमृत सम बात॥ कहौ अमृत सम बात रामसिय कुशल विशेखी। लखन सहित सुचेम अवध आवत तुम देखी॥ आवत देखि विशेखि तुम कह हनुमन्त प्रदेश ले। मिले बहुरि कपि कण्ठलगि आये यह सन्देश ले॥ २१॥

अवध आय प्रकटी सबै गुरु पुरजन समुझाय। आवु कुशल आये लखन सीय सहित रघुराय॥ सीय सहित रघुराय सजहु मङ्गल पुरनारी। वन्दनवार पताक चर्म चामर गज भारी॥ गज भारी रथ तुरग सँग साजि भरत मङ्गल तबै। चले नगर बाहिर मिलन पुरशोभा प्रकटी सबै॥ २२॥

भरत सङ्ग हनुमन्त लै देखत गगन विमान। नगर नारि नर देखि कै उतरे कृपानिधान॥ उतरे कृपानिधान मिले गुरु प्रथम गोसाँई। आशिष देय सनेह कुशल पूछो मुनि-

राई॥ मुनिराई प्रभु भेंटिकै भरत हृदय भगवन्त लै। अति सनेह पूरे मगन भरत सङ्ग हनुमन्त लै॥ २३॥

मिले सकल पुर जन मुदित राम चरित यह कौन। सब जानत प्रथमहि मिले हमकहं राम प्रवीन॥ हमकहँ राम प्रवीन ऊँच मध्यम नर नारी। यथा योग्य मिलि सबहि बहुरि भेंटो महतारी॥ भेंटो महतारी सबै प्रथम कैकयी पर्म हित। बिरहबिथा नाशी सकल मिले सकल पुरजन मुदित॥ २४॥

इति लङ्काकाण्डसमाप्तः॥

अथ उत्तरकाण्ड प्रारम्भ।

राम अवध आये कुशल घर घर मङ्गल साज। पुरी भई अमरावती रामराज्यके काज॥ रामराज्यके काज भरत सब साज सजाई। सुर गन्धर्व मुनीश सकल आये सुरसांई॥ सुरसांई मङ्गल सजे बजे अवध दुन्दुभि विमल। बर्षि सुमन जय जय कहत राम अवध आये कुशल॥ १॥

शुभ सिंहासन शुचिबन्यो रघुपति बैठे आप। भूषण मणि-गण जगमगत कोटिन भानुप्रताप॥ कोटिन भानुप्रताप वेदध्वनि विप्र उचारैं। छत्रचँवर धनुबाण कुण्ड भरतादिक धारैं॥ भरतादिक सुखमय अगम सिय आई भूषण बन्यो। रामसिया शोभित भये शुभ सिंहासन शुचि बन्यो॥ २॥

प्रथम तिलक गुरु उच्चरयो विप्र न आयसु दीन। देव सुनिन जय उच्चरी दुन्दुभि हने नवीन। दुन्दुभिहने नवीन सबहि बर अस्तुति ठानी। मातन आरति साजि गीत गावहिं मृदुबानी॥ मृदुबानी सुर मुनि सबै जयति राम जय जय करयो। बन्दि वेद बिरदावली प्रथम तिलक गुरु उच्चरयो॥ ३॥

कहि बशिष्ठ प्रथमै वचन सब प्रकार सामर्थ। सुर पाले खलदल दले द्विज महि सज्जन अर्थ॥ द्विज महि सज्जन अर्थ भये दशरथके बारे। निगम सेतु प्रतिपालि सुयश जगमहँ विस्तारे॥ विस्तारे अद्भुत चरित पालय लय कृत पुनि चरन-जय जय नर अवधेशसुत कह बशिष्ठ प्रथमै वचन॥ ४॥

कहि विधि सबहि सुनायके रामचरित्र अपार। निगम शेष शङ्कर सकल को जग जाननहार॥ को जग जाननहार अमित अवतार विहारी। सुर सज्जनके हेत करत लीला बपुधारी॥ लीला तन मङ्गलभवन खल दलि भुवन बसायके। जगमङ्गलकारणकरण कह विधि सबहि सुनायके॥ ५॥

उठि शङ्कर जय जय कहत राम स्वरूप तुम्हार। मङ्गल-मय मूरति मधुर सुमिरत सब दातार॥ सुमिरत सब दातार लहत सुख सुन्दर ध्याये। गुणगण पावन गाय तरत भव-निधि सुख पाये। सुख पाये मुनिगण मनहिं ज्ञान ध्यान सो ज्यहि चहत। रविकुलकमलदिनेश प्रभु उठि शङ्कर जय जय कहत॥ ६॥

सुरपति कहत प्रणाम करि सुनहु राम सुरभूप। प्रति अवतार अपार गुण बर्णत वेद अनूप॥ बर्णत वेद अनूप दुष्टजन खण्डनहारे। मन गोतनको लसित राम तुमताहि पियारे॥ ताहि पियारे तुम लगत बचे मोह

मद नामकै। हम निशिदिन विषयाविवश सुरपति कहत प्रणामकै ॥ ७ ॥

रविअञ्जलि जोरे कहत राम सुनहु मम बैन। कृपा करिय निज चरण रति निशि दिन राजिवनैन॥ दीजिय राजिवनयन तोष बड़ हृदय हमारे। जबते मम कुल जन्म रावरे नरतन धारे॥ नरतन धरि यश विस्तरो चिरञ्जीव जोरी रहत। जय जय रविकुलरविविमल रविअञ्जलि जोरे कहत ॥ ८ ॥

अनिल अनल धर विनय करि खलखण्डन तुम राम। राज आज त्रयपुर विशद राजहि जग अभिराम॥ राजहि जग अभिराम लव सज्जन सुखकारी। नरतन धनु धरि हाथ हरयो धरणी अघभारी॥ धरणीमण्डन खण्डि खल राज विराजत भुवन भरि। जय जय श्रीसीतारमन अनिल अनल धर विनय करि ॥ ९ ॥

निगम विप्रतन करि कहत राम सुनहु सुरईश। कोटि कोटि यत्न करत नहिं पावत योगीश॥ नहिं पावत योगीश हृदय शङ्कर पचिहारे। विधि सनकादिक नेम धर्म करि तुम्हें निहारे॥ तुम्हें निहारत सुख लहैं ते कपि भालुहि कर गहैं। जयति राम लीला अगम निगम विप्रतन करि कहैं ॥ १० ॥

शारद नारद जोरि कर विनय करत चित लाय। अद्भुत चरित तुम्हार प्रभु सुनिये श्रीरघुराय॥ सुनिये श्रीरघुराय पिता दशरथ सम नाहीं। तृण सम तन तजि दीन सुयश जाको जगमाहीं॥ सुयश कियो जेहि जन्म भरि गयो विरह ल अमरघर। गीधक्रिया निजकर कहैं शारद नारद जोरि कर ॥ ११ ॥

अस्तुति करि मुनि सुर गये राम भरत बुलवाय। कपि-पति ऋच्छ बिभीषणै नल नीलहि अन्हवाय॥ नल नीलहि अन्हवाय भरत भूषण पहिराये। अङ्गद सहित समाज राम सब निकट बुलाये॥ राम निकट बैठारिके मधुर वचन बोलत भये। कपिकीरति प्रभु उच्चरत अस्तुति करि मुनि सुर गये॥ १२॥

मुनिनायक ये नील नल कीन्हे अद्भुत कर्म। शत योजन सागर बँध्यो सेतु उपल गुरु धर्म॥ सेतु उपल गुरु धर्म शीश रावणके फारे। मन्दिर सुवरण खम्भ कलश महिधर बहु डारे॥ महिधर डारि सँवारि अरि रण मण्डल हति असुरदल। महा-वीर बानत बल मुनि नायक ये नील नल॥ १३॥

मुनिनायक कपिराज ये करे हमारे काज। बानर कोटि पठाइयो सिय शोधन शिरताज॥ सिय शोधन शिरताज करयो रणमण्डल भारी। मन्त्र तन्त्र सब सुदृढ़ सैन बल अबल बिचारी॥ अबल बिचारी ठौर जहँ तहँ बल दिये समाज ये। महाबली बुधिवन्त अति मुनिनायक कपि-राज ये॥ १४॥

सुनहु बिभीषण बहु कियो मिल्यो मोहिं तजि भाय। रावण अरु घननादकी दई सोचु दर्शाय॥ दई सोचु दर्शाय गदा पुनि रावण मारयो। लक्ष्मण घायल भये बैद्यको नाम उचारयो॥ नाम उचारयो शल्य दल करि उपाय लक्ष्मण जियो। राम कहत मुनिराजसों सुनहु बिभीषण बहु कियो॥ १५॥

ऋच्छनाथ बल दल महा रावण हत्यो प्रचारि। मेघनादको पाँउ धरि लङ्क गयो फटकारि॥ लङ्क गयो फटकारि असुर दल दले समाजन। सेतु बाँधि धरि यूथ हाथ शिर धरि गिरि राजन॥ शिर धरि गिरि रावण दले समय शत्रु रण

नहिं रहा। सुनिनायक लायक सबै ऋक्षनाथ बल दल महा॥ १६॥

ये अङ्गद मुनि अतिबली जिन रावणपुर जाय। मान ज्ञान अरिदल दल्यो रोपि सभा धरि पाँय॥ रोपि सभा धरि पाँय केश धरि रावण रानी। महि कठोरि पुनि हल्यो बीश दश चरण डरानी॥ चरण धरे कम्पत असुर सैन समर अति दलमली। रणविजयी शुभ सुयशदा ये अङ्गद मुनि अतिबली॥ १७॥

ये हनुमन्त बिचारि मुनि प्रथम मिलाये मोहि। कपिपति पुनि दल जोरिकै लै मुद्रिक कर जोहि॥ लै मुद्रिक कर जोहि बीर लै सुभट सिधायो। तृषित लगे सब मरण जाय तेहि सुजल पिआयो॥ सुजल पिआयो सबहिको समुद-तीर रचि मन्त्र पुनि। पच्च तच्च सम्पाति दै ये हनुमन्त बिचारि मुनि॥ १८॥

गयो उदधि पारै सुभट साथी तट बैठाय। देखि सीय मणि हाथ लै बन उजारि फल खाय॥ बन उजारि फल खाय असुर मारे भट भारी। करि उपाय पुर लङ्क कूदि घर घर पुर जारी॥ जारि बारि पुनि वारिनिधि कूदि चल्यो व्यंकट बिकट। गर्जत घोर कठोर अति गयो उदधि पारै सुभट॥ १९॥

सिय मणि द दल लै चल्यो दिग्गज दरकत अङ्ग। पार जाय घेरो अरिहि दुर्ग कियो पुर भङ्ग॥ दुर्ग कियो पुर भङ्ग समर लच्छण दुख पायो। द्रोणागिरि धरि शीश रयन नभ-मारग धायो॥ मारग धावत भर लग्यो भरत कोपि उर शल दल्यो। लषण शोच उरमानिकै सिय हित गिरि शिर लै चलयो॥ २०॥

कहँ लौं गुण मुनिमैं कहौं कपि समाजके काज। भरत लषणते प्रिय सदा कपिनायक शिरताज॥ कपि नायक शिरताज मिले उठि सबहि बहोरी। बिदा किये सन्मानि परस्पर प्रीति न थोरी॥ प्रीति न थोरी प्रभु करी सब प्रणाम करि सुख लहो। बार बार यश प्रभु कहैं कहँलौं गुण मुनिमैं कहौं॥ २१॥

राम राज राजत भयो गयो सकल दुख भागि। रोग शोक अपगति मरण काल कर्म गुण त्यागि॥ काल कर्म गुण त्यागि भई सतयुगकी करणी। बारि दमन गति बारि भई सुरभी सुर धरणी॥ सुरभी सुर धरणी भई कपट दम्भ पाखँड गयो। धर्म विवेक विचार नर राम राज राजत भयो॥ २२॥

काम क्रोध अघ रोग सब मान मोह मद गर्व। दोष दुःख ज्वर पीर खल दारिद्दाहन सर्व॥ दारिद्दाहन सर्व बैर पर-धन परनारी। ये सुभाय सब छूटि गई मति परअपकारी॥ परउपकारी लोग सुख भोग योग महि प्रकट अब। गये अमङ्गल कृत जगत काम क्रोध अघ रोग सब॥ २३॥

नेम प्रेम प्रकटे जगत दया क्षमा सन्तोष। योग यज्ञ जप तप सुपथ वेद सुमङ्गल पोष॥ वेद सुमङ्गल पोष रहो परमा-रथ पूरो। पर अघ निज कृत दुःकृत कुकृत दुस्तर भय दूरी॥ दुस्तर भय दूरी करे राम तेज रवि जगमगत। कमल कोक सब धर्म बर नेम प्रेम प्रकटे जगत॥ २४॥

एक राम गुण गायबो यह कलिकर्म न और। ताते तुलसीदासके मन्त्र यहै शिरमौर॥ मन्त्र यहै शिरमौर राम शुचि कीरति गाऊँ। साधन उत्तम जानि सुमति निज मनहि दृढ़ाऊँ॥ मनहि दृढ़ाऊँ मन्त्र यह जिहि प्रसाद

सुख पायबो। शुक नारदको सीख यह एक रामगुण गायबो ॥ २५ ॥

एक राम सुख नाम धृत ध्यान रामको रूप। राम चरित गावत परम धर्म पबित्र अनूप ॥ धर्म पबित्र अनूप करिय जब लौं जग जीजै। रसना रस करि चरित सरित निशि बासर पीजै ॥ निशि वासर श्रम तजि भजे तुलसिदास यह शुभ सुकृत। कामधेनु कलि कल्पतरु एक राम सुख नाम धृत ॥ २६ ॥

इति श्री उत्तरकाण्ड समाप्तम ॥

अथ रामायण छन्दावली ॥

दशकन्धर घटकर्ण अघ भारधरा दुख होइ। गई गगन गोदेह धरि कहि सुरपतिसों रोइ १॥ छन्दचौपय्या॥ सुरपतिगुरु बूझा सुरमति सूझा गे विधिलोक तुरन्ता। विधि सुर समुझाये सङ्ग सिधाये जहँ सोवत श्रीकन्ता॥ दशमुखकी करणी बहुविधि बरणी धरणी जेहि बिधि रोई। सुनि शारँगपाणी भइ नभवाणी विधि जाना नहिं कोई॥ बिधि वचन सुनाये सुर समुझाये तजहु शोच मन देवा। जो जनहितकारी प्रभु असुरारी करहिं पार सोइ खेवा॥ वानर गोपूछा मन धरि रीछा बसहु जाय वनमाहीं। अवधेशनिकेता व्यूहसमेता प्रभु आवत तुमपाहीं २॥ दोहा॥ यहि बिधि बिबुध बिबोधि गे गे सुर निज निज धाम। कछु काल बीते अवध प्रकट भये श्रीराम ३॥ शशिवदनछन्द॥ जनहितकारी प्रकट सुरारी। नरतनधारी छबिसुखकारी॥ मृदुभुवकारी अरिदलहारी। सुमुख निहारी बलि महतारी॥ अवधविहारी भवभयहारी। जयतपुरारी सबअघहारी॥ अवधउघारी यह प्रणभारी। तुलसिहि तारी शरण सम्हारी ४॥ हरिगीतिकाछन्द॥ सम्हारि शरण बिचारि तुलसी रामयश गावत लियो। त्रयतापशमन कलेशहरको और नहिं जग मग वियो॥ जेहि गाइ यमन किरातखल हरिपुर गये करि सुधि हियो। रघुवीरयश सुनि हिय न हरष्यो बुरो तिन अपनो कियो ५॥ सुन्दरीछन्द॥ राजत मेचक अङ्ग महाछवि। बोल मनोहर कहहिं महाकवि॥ जो सुनिकै

जरि जाय महामल। सादर गावहिं पावहिं सम्बल॥ तूण कसे कटि चाप थिलीमुख। मातु बिलोकि अपार लहे सुख॥ बालचरित्र करे रघुनन्दन। लोग निहारि हरे दुखबन्दन॥ ग्यारह वर्षके राम भये जब। बोलि वशिष्ठ उपनयन दये तब॥ आइ तपोधन याचि लये सुत। बोलि वशिष्ठहि राउ दये युत॥ ताड़क तारि सुरारि दई गति। बालविनोदक देव किये मति॥ रामहिं मन्त्र दये तब श्रीमति। राम लषण सुनि काज किये अति॥ मारि सुबाहु करी मखकी जब। देत मुनीश अशीश महा तब॥ गौतमतापसतीथ तरी मग। राम धरे मिथिलापुरको पग॥ आइ विलोकि विदेह महाछवि। देखि नरेश समाज गयो दवि॥ आयसु दीन्ह विदेह नरेशनु। चाप चाढ़ वत पूज महेशनु॥ डिगै न खण्डेउ राम प्रयासनु। सूमके बोजसमान शरासनु॥ मेलि सिया जयमाल मनोहर। बाजि बधाव धरा अरु अम्बर॥ व्याहि चले न्रप चारि सहोदर। मारग बीच मिले फरसाधर॥ चापहि सौंपि भये तपसीवर। राउ विवाहि आइ अपने घर॥ बालचरित्र विवाह यथामति। जो सुनिके नरनारि लहै गति ६॥ दोहा॥ चरित चारु रघुवीरके सुनि मन कीन्ह विचार। निज मनसों तुलसी कहै कस न होइ भव पार ७॥

इति श्रीबालकाण्डसमाप्तम्॥

चामरछन्द॥ आय कौशलेशने सुहाय आरसी गही। काननें समीप केश लेखि प्रेत है सही॥ रायकानमें मनोजराय आइ यों कही। राज देव रामको बने सिधाव तो सही॥

कैकयी सुनी सुवात शोकमाल ते गही। राज माँग पूतको श्रीरामको वने कही॥ राइनते सुनी सो बात तात ताप यों तये। रामसीय सङ्गले सवन्धु काननै गये॥ रायरामचन्द्र साथ प्राण काढ़िके दये। गङ्गप्राग होइके सुचित्रकूटमें गये॥ राजकाजके भरत्य शोकसिन्धु में भले। साथ ले वशिष्ठ वन्धु पांयप्याद ही चले॥ केवटे सवन्धु भेंटि राम प्राग जाइके। राम दीन पावरी हिये सुलीन लाइके १॥ दोहा॥ राम पावरी पाइके गवन गेहको कीन। गणक बोलि तब भरथने नेमधरमव्रत लीन २॥

इति श्रीअयोध्याकाण्डसमाप्तम्॥

सुन्दरीछन्द॥ विदेहजातको कहै सुरेशतातने छुवो। श्रीरामवाण लागते विहीननैन सो हुवो॥ श्रीदेवदत्त तातको श्रीराम बन्दना कियो। तिन्होंकि तीय सीयको सचैलभूषणो दियो॥ विराध वद्धि रामचन्द्र शारभङ्गके गयो। तहाँ सुरेश देखिके सवन्धु सुःखसो भयो॥ वहोरि श्रीसवन्धुसङ्ग पञ्चवाटिका गये। तहांनखानकाननाके सूपनेखके हये॥ त्रिशूश आदिदे सुरारि एक वाणसों हये। सुनी सो बात रावणा मरीचपास सो गये॥ कही कथा सुनी तिनो सो नेकुरङ्ग सो भयो। लेखो श्रीराम मारि ताहि धाम आपनो दयो॥ सुन्यो सो शब्द सीय शेष राम पास पाठयो कह्यो विरूप रावणा ले सीय जातयो भयो॥ सवन्धुशाल देखिके कृपाल दुःखमें पगे। तहां ललामशालते तिन्होंतो वूझते लगे॥ कही सुसुद्धि गीधने कवन्धवन्धके चले। करी सनाथ शेवरी सवन्धु वेरले भले॥ वहोरि पन्चताल श्रीकृपालराम जायके। तहां

मुनीशनारद कियो प्रणाम आइकै १॥ दोहा॥ लखि सुकण्ठ श्रीरामकहँ मनमहँ कीन्ह विचार। पुरुषसिंह ये कवन हैं देखहु पवनकुमार २॥

इति श्रीआरण्यकाण्डसमाप्तम्॥

चञ्चरीछन्द॥ रामरामको लेवाइकै तन शैल ऊपर जाइकै। जात बंदहि बीच दैअरि कीन्ह प्रीति दृढ़ाइकै। क्यों रहौ तुम शैलऊपर राम बूझ कपीशसों॥ त्यों कह्यो व्योहार सगरो बालिको डर रामसों॥ बालिको वधि बाणसों कपिनाथ तोहिं करौं सही। जानकी तुमको मिलावों विहँसिकै कपिने कही॥ बालि मारि कृपालराम सुराज दीन्ह सुकण्ठको। मास चारि सुवासकै तहँ आसना करि कण्ठको॥ जानकी सुधि लेनको कपिईश कीश पठाइकै। मासमें सुधि वेगि ल्यावहु खोजि देखहु जाइकै १॥ दोहा॥ कीन्हयो विवर प्रवेश तिन अशन कियो फलफूल। पूँछि तियहि मूंदे नयन ठाढ़े जलनिधिकूल २॥

इति श्रीकिष्किन्धाकाण्डसमाप्तम्॥

तोटकछन्द॥ हनुमान गयो तरि सागरको। उलह्यो जनु खोइ अजाखुरको॥ गिरि ऊपरपै चढ़ि लङ्क लखी। हनि लङ्किनिको विधिबात भखी॥ लघुरूप धरयो हनुमान बली। निशि लङ्क विलोकि नाइ भली॥ रघुबीर प्रिया कितहूं न मिली। तहँ देखि बिभीषणकोरि चली॥ रघुबीर सुआजुहि चित्त करयो। लखिकै हुलसान हियो सुभरयो॥ तेहिको

मिलि सुद्धि लई सगरी। हरषे हरिको मिलि ज्यों नगरी॥ तहँ जाय लखी रघुवीरप्रिया। कृश अङ्ग भली सुखहीन सिया॥ पुनि रावण आनि कलेश किये। सुनि क्रोध भयो हनुमान हिये॥ सुँदरी दृढ़ डारि निहारि प्रिया। सुखदुःख भयो हनुमन्त हिया॥ रघुवीरको दूत प्रसन्न किया। फलखानको आयसु मांगि लिया॥ लखि बाग लग्यो फल खान हनू। उतपात महा अतिबाग घनू॥ मनुजादनि जाय पुकार करी। हनुमान हनी सेना सगरी॥ घननाद गज्यो पवनातमजा। दशकन्ध सभामहँ जाइ गजा॥ चलिगो रिपु ज्यों न डरो मनमें। मद-मत्त गयन्दनके घनमें॥ घनतेल लँगूर लपेट सही। जलसो निजपेकरि लङ्क दही॥ हनुमानके हांकते गर्भ गिरो। मनुजाद जिया नहिं धीर धरो॥ सियआयसु लेकरि सिन्धु तरो। हनुमान सदेह कह्यो सिगरो॥ सुनिके हियसिन्धु अनन्द नरो सजि सैन समूह पयान करो॥ बल देखि पयोनिधि पांव-परो। नल देखिके सेतु समुद्र तरो॥ सुनि मयतनया पिय-पांय परी। प्रभु व्यापकविश्व विराटहरी॥ तब जाय सभाह विचार करी। तपसौन धरो हमरी नगरी॥ तिन मन्त्रिन मन्त्र कुमन्त्र कियो। लघु बन्धुहि मारेसि लात हियो॥ रघुवीरके तीर गयो भजिके। बृपको अविवेक कह्यो सजिके॥ प्रभु लङ्क हि अङ्गदको पठयो। पद रोपि सभाप्रण जाइ ठयो॥ दशकन्ध सभा महँ बीरबचा। नटरो पदज्यों महिलङ्क रचा॥ बरबीर सभा मद मारि फिरो। रघुवीर पदाम्बुज पाइ परो २॥ दोहा सुनि कृपालु अङ्गदबचन बूझे मन्त्रीयूह। अनी चारि करि द्वारचहुँ लागे कीशसमूह २॥

इति श्रीसुन्दरकाण्ड समाप्तम्॥

भुजङ्गप्रयातछन्द॥ लगो सैन सम्मुह चाल्यो दुआरे। भयो घोर देवारि नादे पुकारे॥ तबै बीर बांके दशानन बुलाये। सबै जाय खाहु रीछ वानर जो आये॥ महारोष-मातेहि देवारि गाजे। महामत्त मातङ्गराजो विराजे। बनी बाइनी व्यूहकै बाजि साजे। ध्वजा बाण नीशान घनघोर गाजे॥ करै युद्ध नानादि योधा प्रचारै। लरैं वीर कपि भालु चारयो दुआरे॥ फिरैं रुण्ड वेमुण्ड जै जै पुकारै। तहां राम सौमित्र रणमध्य मारै॥ तबै वीर रणधीरवन्धू जगाये। कही जो कथा सीय जेहि भांति लाये॥ लरयो जाइ रघुवीर जो युद्ध मद्धे। गयो त्यागि तन जाइ योगी न लद्धे॥ सुनौ रैनिचर ईसने बन्धु मारयो। तबै तातसों वीद्ध घननाद कारयो॥ लख्यो प्रात पौरुष पिता जो हमारयो। करयो क्रोध शक्रारि सेना बिडारयो॥ तबै ताहि ऋक्षेश गहिकै प्रभायो। गयो मूर्च्छिकै तुरत लङ्का पठायो॥ हत्यो ताहि सौमित्रना युद्ध मध्ये। करै देव जै जै सआनन्द वध्ये॥ सुन्यो तीयने पीयको वीर सांचो। भई सो सती सत्य तिहुँलोक मांचो॥ सुन्यो तातको बद्ध दशकन्ध शोचा। मरै बाण नहिं हाथ भे पूत पोचा॥ हनों आजु रणमध्य रामै प्रचारी। कहा वा-पुरो बानरा बीर चारी॥ चले साजि सेना सबै बीर गाजैं। करैं राग साहू पणव-भेरि बाजैं॥ तबै रामके सामुहे रथ जो आयो। हिये दृष्टि श्रीराम सौमित्र लायो॥ तबै राम शरको सकटि खैंचि बाँध्यो। लियो चाप कर साधि वर ताहि साध्यो॥ कुटे बाण दशशीशके शीश छीने। लसै शीश अतिशय भये ते नवीने॥ तबै राम लङ्केशको मन्त्र बूझो। हमारे शरोसो न दशकन्ध जूझो॥ सुनौ नाथ यहि ईशको शीश दीन्हे। मही होहि भोगै जिन्हैं पुण्य कीन्हे॥ हिये

मध्य पाके सुधा शोध पोषे। छुटे बाण यकतीस हियमें सो शोषे॥ मरे नाथ दशशीश सुर साधु तोषे। हत्यो धूमि रघुवीर लङ्केश बीषे॥ बजे दुन्दुभी व्योमचर साधु गावैं। नचैं सुर वधू वृष्टि सुमनोंकि लावैं॥ दियो तासुके बन्धुको राम टीका। तिसै हेतु कपि भालु ल्यायो असीका॥ तबै राम श्रीजानकी बोलि लीन्हो। धरै देह द्विजकी अनल आगि दीन्हो॥ लिये सङ्ग कपि भालु सीता समेता। चले राम चढ़ि यान उत्तर निकेता॥ चल्यो यान उत्ताल तिरथै सो आयो। तहां राम हनुमान अवधै पठायो॥ दोहा॥ सीक भाल सिय सङ्गले तिरवेणी को न्हाय। भरद्वाजको बन्दि प्रभु केवट भेंट्यो आय॥

इति लङ्काकाण्ड समाप्तम्॥

छन्द॥ शुभ सगुण अवध जनाइ तेहि चण होत सुद्ध मङ्गल महा। शीतल सुगन्ध सुमन्द मारुत अमल जल सुरसरि वहा॥ शुभ अङ्ग फरकत भरतके हिय हुलसि अहि आनँद लहा। तेहि समय श्रीहनुमान प्रभुको आइ सन्देशो कहा॥ मन हरष भरत सुनाइ गुरुकहँ मातु सकल बुलाइकै। कहि खबरि श्रीरघुवीरकी तिन सजे मङ्गल जाइकै॥ गुरु बन्धु संयुत चले प्रभुपर निरखि पदपङ्कज गहे। धरि भरत भुज उर ल्याइ प्रभु राजीवलोचन जल बहे॥ पुनि प्रेमयुत सब मातु भेटीं निरखि प्रभु हुलस्यो हियो। तिन कनक मणिगण बसन भूषण आनि महिदेवन दियो॥ शुभ समय जानि वशिष्ठ वेगि लिवाइ लियो सुमन्तको। सब राजसाज सम्हारि तेहि चण राज दियं भगवन्तको॥ सिय सहित रघुकुलमणि बिराजत सुभग सिंहासन परैं। सुर सुमन बरषहिं

हिये हरषहिं ब्रह्मादि सब जै जै करैं॥ गहि छत्र चामर चमर असि धनु वीर तरकसके लये। भरतादि अनुज बिभीषणाङ्गद हनुमान चित चरणन दये॥ सुनु सिया श्रीरघुवीरको अविवेक सुनि उरमें धरे। कह दास तुलसी जन्मसुख लहि जलधि जग बिन श्रम तरे॥ दोहा॥ नित नव मङ्गल अवधपुर करहिं सकल नरनारि॥ लहहिं चारिफल अछत तनु रघुवरछप निहारि॥ छन्द॥ नित प्रीति सरित अन्हाइ बन्धुन सहित प्रभु भोजन करैं। गज बाजि राजसमाज लखि सब देखि बन उपबन फिरैं॥ बैठे सभामहँ जाइ श्रीरघुवीर दुख सबके हरे। हरिन्याव श्वान उलूकको लखि लोग सब बिस्मय करे। माण्डवी श्रुतिकिरति उरमिलासो सबनि सुत द्वै द्वै जने। जानकी सुत युगल जाये सब निगम आनँद घने॥ सनकादि नारद आदि मुनिवर सकल अवधहि आवहीं। लखि जाहि रघुवरके चरित सब बिधिहि जाय सुनावहीं। यक बारको महिदेवको सुत सभामहँ आयो मर्यो। गुरु बूझि तपते मारि शूद्रहि तबहिंसे उठि जिय पर्यो॥ यहि भाँति रामचरित परमपवित्र नित नूतन करैं। कहि दासतुलसी सुनत सबके बचन मन पातक टरै २॥ दोहा॥ सुनि सीताके युगल सुत राम कीन्ह अनुमान॥ लोक सिखावन दीन्ह हित बोले श्रीभगवान ४॥

इति श्रीउत्तरकाण्ड समाप्तम॥

तुलसी सतसई ॥

नमो नमो श्रीराम प्रभु परमातम परधाम। जेहि सुमिरत सिव होत हैं तुलसी जन मन काम॥ राम बाम दिसि जानकी लषण दाहिनी ओर॥ ध्यान सकल कल्याणकर तुलसी सुरतरु तोर॥ परमपुरुष परधाम वर जापर अपर न आन। तुलसी सो सतुकल सुनत रम्य सोई निर्वान॥ सकल सुखद सुख जासु सो राम कामनाहीन। सकल काम-प्रद सर्वहित तुलसी कहहिं प्रवीन॥ जाके रोमैरोम प्रति अमित अमित ब्रह्मण्ड। सो देखत तुलसी प्रकट अमल सु-मंगल प्रचण्ड॥ जगतजननि श्रीजानकी जनक राम शुभ रूप। जासु कृपा अति अवहरषि करषि विवेक अनूप॥ तात मातुपर जासुके तासु न लेश कलेश। ते तुलसी तजि जात किमि तजि घर तर परदेश॥ पिता विवेकनिधान वर मातु दया युत नेह। तासु सुवन किमि पाइ है अनत अटन तजि गेह॥ बुद्धि विनय गतिहीन मिशु सुपथ कुपथ गत जान। जननि जनक तेहि किमि तजे तुलसी सरिस अजान॥ मात तात सियरामकख बुधि विवेक परमान। हरत अखिल अघ तरुण तर तब तुलसी कछु जान॥ जिन्हसे उद्भव वर विभव ब्रह्मादिक संसार। सुगति तासु तिनकी कृपा तुलसी बदहि विचार॥ अघि रवि सीताराम नम तुलसी उरसि प्रमाण॥ उदित सदा अथवत न सो कुबलित तमकर हान॥ तुलसी कहत विचार गुरु राम सरिस नहिं आन। जासु कृपा शुचि होति रुचि विशद विवेक प्रमान॥ रारसरूप अनूप अल

हरत सकल मलमूल। तुलसी मर्म हियो गलहि उपजत सुख अनुकूल॥ रेफरमित परमातमा सह अकार सिय रूप। दीरघ मिलि बिधि जीवद्वय तुलसी अमल अनूप॥ अनुस्वार कारण जगत श्रीकर करन अकार॥ मिलत अकार मकारसों तुलसी हरि दातार॥ ज्ञान विरागै भक्ति सह मूरति तुलसी पेखि। वरणत गति मति अनुहरत महिमा विमल विशेषि॥ नाम मनोहर जानि जिय तुलसी करि परमान॥ वरण विपर्यय भेदते कहो सकल शुभ जान॥ तुलसी शुभ कारण समुझि गहत रामरस नाम। अशुभहरण शुचि शुभकरण भक्ति ज्ञान गुणधाम॥ तुलसी राम समान वर सपनेहु अपर न आन। तासु भजन रतिहीन अति चाहसि गति परमान॥ अहि रसना धन धेनु रस गणपति द्विज गुरुवार। माधव सित सिय-जनम तिथि सतसैया अवतार॥ भरण हरण अति अमिति विधि तत्त्व अर्थ कविरीति। सङ्केतिक सिद्धान्त मत तुलसी वदन विनीति॥ विमल बोध कारण सुमति सतसैया सुखधाम॥ गुरुमुख पढ़ि गति पाइ हैं विरति भक्ति अभिराम॥ मन भय जरसत लाग युत प्रकट छन्द युत होइ। सो घटना शुभदा सदा कहत सुकवि सब कोइ॥ जत समान तत वान लघु अपर वेद गुरु मान संयोगादि विकल्प पुनि पद न अन्त कह जान॥ दीरघ लघ करि तहँ पढ़ब जहँ सुख लहि विश्राम। प्राकृत प्रकट प्रभाव इह जनित बुधाबुध वाम॥ दुइ गुरु सीता सारमण रा-मसोगुरुलघु होइ। लघु गुरु रमा प्रलक्षगन युगलहु हरगण सोइ॥ सहसनाम मुनि भनित सुनि तुलसी वल्लभ नाम। सङ्कचति यह हँसि निरखि सिय धरमधुरन्धर राम॥ दम्पति रस रसना दशन परिजन वदन सुगेह। तुलसी हर हित वरण शिशु सम्पति सरल सनेह॥ हिय निर्गुण नयन सगुण रसना राम

सुनाम। मनहुँ पुरट सम्पुट लसत तुलसी ललित ललाम॥ प्रभु गुणगण भूषण वसन वचन विशेष सुदेश। रामसुकीरति कामिनी तुलसी करतब केश॥ रघुवरकी रति तियवदन छव कह तुलसीदास। शरदप्रकाश अकाशछवि चारु चिबुक तिल जास॥ तुलसी शोभत नखतगण शरदसुधाकर साथ। मुक्ता झालर झलक जनु रामसुयश शिशु हाथ॥ आतम मध्य विवेक बिनु राम भजत अलसात। लोक सहित परलोककी अवश विनाशी बात॥ बरु मराल मानस तजे चन्द्र शीत रवि घाम॥ मोर मदादिक जो तजे तुलसी तजै न राम॥ आसन दृढ़ आहार दृढ़ सुमति ज्ञान दृढ़ होय। तुलसी विना उपासना बिनु दुलहेकी जोय॥ रामचरण अवलम्ब बिनु परमारथकी आश। चाहत वारिदबुन्द गहि तुसी चढ़न अकाश॥ रामनाम तरुमूल रस अष्ट पत्र फल एक। युगल सन्त शुभ चारि जग वरणत निगम अनेक॥ राम कामतरु परिहरत सेवत कलितरु ठूँठ। स्वारथ परमारथ चहत सकल मनोरथ झूंठ॥ तुलसी केवल कामना रामचरित आराम। निशिचर कलि करि निहत तरु मोहि कहत विधि बाम॥ स्वारथ परमारथ सकल सुलभ एकही ओर। द्वार दूसरे दीनता उचित न तुलसी तोर॥ हितसम हित रति रामसन रिपुसन वैर विहाव॥ उदासीन संसारसन तुलसी सहज सुभाव॥ तिलपर राखे सकल जग विदित विलोकत लोग॥ तुलसी महिमा रामकी को जग जानन योग॥ जहां राम तहँ काम नहिं जहां काम नहिं राम। तुलसी कबहीं होत नहिं रवि रजनी इक ठाम॥ राम दूर माया प्रबल घटति जानि मनमाहिं। बढ़ति भूरि रवि दूर लखि शिरपर पगुर छाहिं॥ सम्पति सकल जगतकी

प्यासा सम नहिं होय। प्यास सोइ तजि रामपद तुलसी अलग न होय॥ तुलसी सो मति चतुरता राजकरम लव-लीन। परमन परधन हरनकहँ गनिका परम प्रवीन॥ चतुराई चूल्हे परे यम गहि ज्ञानहि खाय॥ तुलसी प्रेम न रामपद सब जर मूल नसाय॥ प्रेम घरोर प्रपञ्च सब उपजी बड़ी उपाधि॥ तुलसी भलो सो बेढ़ई बेगि बांधई व्याधि॥ राम विटप तर विबुद्ध वर महिमा अगम अपार। जाकहँ जहँलगि पहुँच है ताकहँ तहँलगि डार॥ तुलसी कोशलराज भजु जनि चितवै कहुँ ओर। पूरण राम मयङ्क मुख करु निज नयन चकोर॥ ऊँचे नीचे कहुँ मिलै हरि-पद परम पियूष। तुलसी काम कयूरसे लागै कीनेउ रूप॥ स्वामी होनो सहज है दुर्लभ होनो दास। गाडर लायें ऊनको लागीं चरै कपास॥ चलव नीति सब रामपद प्रेम निबाहब नीक। तुलसी पहिरिय सो वसन जो नय वारत फीक॥ तुलसी रामकृपालुते कहि सुनाव सुख दोष। होउ कुरी दीनता परम प्रीत सन्तोष॥ सुमिरन सेवन रामपद रामचरण पहिचान। ऐसेहुँ लाभ न लखक सन तो तुलसी हित-हान॥ सब सङ्गी बाधक भये साधक भये न कोय। तुलसीराम-कृपालुतें भलो होय सो होय॥ तुलसी मिटै न कल्पना भये कल्पतरुछाँह। जबलगि द्वै न करि कृपा जनकसुताको नाँह॥ विमल विराग सुख निकट दुख जीवन समय सुरीति। रहित राखियै रामको तजेते उचित अनीति॥ जाय कहब करतूति बिनु जाय योग बिन क्षेम। तुलसी जाय उपाय सब बिना रामपदप्रेम॥ तुलसी रामहिं परिहरे निपट हानि सुनु मोद। जिमि सुरसरित सलिल वर सुरा सरिस गङ्गोद॥ हरे चरहिं तापहिं बरे फरे पसारहिं हाथ।

तुलसी स्वारथ मीत जग परमारथ रघुनाथ। तुलसी खोटे दासकर राखत रघुवर साथ। ज्यों सूरखड परोहितहि देत दान यजमान॥ ज्यों जग बैरी मीनको आपु सहित परिवार। त्यों तुलसी रघुनाथ बिन आपनि दशा विचार॥ तुलसी राम भरोस शिर लिये पाप धरि मोट। ज्यों व्यभिचारी नारिकहँ बड़ी खसमकी ओट॥ स्वामी सीतानाथको तुलसि मेरी दौर। तुलसी काग जहाजको सूझत और न ठौर॥ तुलसी सब छल छाँड़िके कीजै राम सनेह। अन्तर पतिसों है कहा जिन देखी सब देह॥ सबही कोप रखे लखे बहुत कहे का होय। तुलसी तेरो राम तजि हित जग और न कोय॥ तुलसी हमसों रामसों भलो मिलो है दून। छाँड़े बनै न सँग रहे ज्यों घरमाहँ कपूत॥ कोटि विघन सङ्कट विकट कोटि मनु जो साथ॥ तुलसी बल नहिं करि सकैं जो सुहृष्ट रघुनाथ॥ लगन मुहूरत योगबल तुलसी गनत न काहि। राम भये जेहि दाहिने सबै दाहिने ताहि॥ प्रभु प्रभुता जाकहँ दई बोल सकित गहि बाँह। तुलसीते गाजत फिरहिं रामछलकी छाँह॥ साधन साँसति सब सहत सुमन सुखद फल लाहु॥ तुलसी चातक जलदकी रीझि बूझि बुध काहु। चातक जीवन जलदकहँ जानत समय सुरीति। लखत लखत लखि परत है तुलसी प्रेम प्रतीति॥ जीव चराचर जहँलगे है सबको प्रिय मेह। तुलसी चातक मन बसो घनसों सहज सनेह॥ डोलत विपुल विहङ्ग बन पियत पोखरीबारि। सुयश धवल चातक नवल तोर भुवन दशचारि॥ सुख मीठे मानस मलिन कोकिल मोर चकोर। सुयश ललित चातक बलित रहौ भुवन भरि तोर॥ माँगत डोलत है नहीं तजि घर अनत न जात। तुलसी चातक भक्तकी उपमा देत लजात॥

तुलसी तीनोंलोकमहँ चातक हीको साथ। सुनियत जासु न दीनता किये दूसरे नाथ॥ प्रीति पपीहा पयदकी प्रकट नई पहिचान। याचक जगत अधीन इन किये कनौड़ो दान॥ ऊंचो जान पपीहरा नीचो पियत न नीर। कै याँचे घनश्यामसों कै दुख सहै शरीर॥ कै बरषै घन समय शिर कै भरि जनम निराश॥ तुलसी चातक याचकहि तऊ लिहारी आश॥ चढ़त न चातक चित कबहुँ प्रिय पयोदके दोष। याते प्रेमपयोधि बर तुलसी योग न दोष॥ तुलसी चातक माँगनो एक एक घन यानि॥ देत सो भूभाजन भरत लेत घूंट भरि पानि॥ द्वै अधीन याचत नहीं शीश नाय नहिं लेय। ऐसे मानी माँगनहि को वारिद बिन देय॥ पवि पाहन दामिनि गरज अति झकोर खर खीझि। दोष न प्रीतमरोष लखि तुलसी रागहि रीझ॥ कोन जियाये जगतमहँ जीवनदायक पानि। भयो कनौड़ो चातकहि पयद प्रेम पहिचानि। मान राखिबो माँगिबो पियसों सहज सनेह। तुलसी तीनों तब फबैं जब चातक मन लेह॥ तुलसी चातकही फबैं यान राखिबो प्रेम। वक्रबूंद लखि स्वातिको निदरि निबाहत नेम॥ उपल बरषि गरजत तरजि डारत कुलिश कठोर। चितव कि चातक जलद तजि कबहुँ आनकी ओर॥ बरषि परुष पाहन जलद पच्छ करै टुक टूक। तुलसी तदपि न चाहिये चतुर चातकहि चूक॥ रटत रटत रसना लटी तृषा सूखिगो अङ्ग। तुलसी चातकके हिये नित नूतनहि तरङ्ग॥ गङ्गा यमुना सरस्वती सातसिन्धु भरिपूर। तुलसी चातकके मते बिन स्वाती सब धूर॥ तुलसी चातकके मते स्वाती पियत न पानि। प्रेमतृषा बढ़ती भली घटे घटैगी कानि॥ सर सरिता चातक तजै स्वाती सुधि नहिं लेइ।

तुलसी सेवक वश कहा जो साहब नाहिं देइ ॥ आश पपीहा पयदकी सुनु हो तुलसीदास। जो अँचवै जल स्वातिको परिहरि बारहमास ॥ चातक घन तजि दूसरे जियत न नाई नारि। मरत न माँगे अर्द्ध जल सुरसरिहूको वारि ॥ व्याधा बधो पपीहरा परो गङ्ग जल जाय। चोंच मूंदि पीवै नहीं धिग पिय मों प्रण जाय ॥ बधिक बधो परि पुण्यजल उपर उठाई चोंच। तुलसी चातक प्रेमपट मरत न लायो खोंच ॥ चातक सुतहि सिखाव नित आन नीर जनि लेहु। ये हमरे कुलको धरम एक स्वातिसों नेहु ॥ दरशन परशन आन जल बिनु स्वाती सुनु तात। सुनत चेचुवा चित चभो समुझि नीति वर बात ॥ तुलसी सुलभे कहत हैं चातक बारम्बार। तात न तरपन कीजियो बिना बारिधरबार ॥ बाज चङ्गु गत चातकहि भई प्रेमकी पीर। तुलसी परबश छाड़ मम परि है पुहुमी नीर ॥ अण्ड फोरि किय चेचुवा तुषा परो नीहार। गहि चङ्गुल चातक चतुर डार्यो बारहि बार ॥ होय न चातक पातकी जीवनदानि न मूढ़। तुलसी गति प्रहलादकी समुझि प्रेमपद गूढ़ ॥ तुलसीके मत चातकहि केवल प्रेम-पियास। पियत स्वातिजल जान जग तावत बारहमास ॥ एक भरोसो एक बल एक आश विश्वास। स्वातिसलिल रघुनाथ वर चातक तुलसीदास ॥ आलवाल मुक्ताहलनि हिय सनेह तरुमूल। हेरु हेरु चित चातकहि स्वातिसलिल अनुकूल ॥ रामप्रेम बिन डूबरे रामप्रेम सह पीन। विशद सलिल सरवर वरन जन तुलसी मन मीन ॥ आप बधिक वर वेष धरि कहै कुरङ्गमराग। तुलसी ज्यों मृगमन मुरे परे प्रेमपट दाग ॥

इति प्रेम भक्ति निर्देशः प्रथमः सर्गः १ ॥

खेलत बालक ब्याल सँग पावक बेलत हाथ। तुलसी बिनु पितु मातु इव राखत सिय रघुनाथ। तुलसी केवल रामपद लागे सरल सनेह। तौ घर घट वन बाटमहँ कतहुँ रहे किन देह॥ के ममता कर रामपद के ममता कर हेल। तुलसी दोनहुँ एक जन खेल छाँड़ि छल खेल॥ के तोहि बलाहि राम प्रिय कै तु राम प्रिय होहि। दुइमहँ उचित तुलन लसुक्ति तुलसी करतब तोहि॥ रावनारिके दास सँग कायर मलहि कुचाल। खरदूषन मारीच सम बूड़ भये वश काल॥ तुलसीपति दरबारमहँ कबी कहु कहु नाहिं। कर्महीन कलपत फिरत चूक चाकरीमाहि॥ राम गरीब-नेवाज हैं राम देत जन जानि। तुलसी मन परिहरत नहिं बुरिबनिर्याकी बानि॥ घर कीन्हें घर होत है घर छाँड़े घर जाय। तुलसी घर बन बीचही रही प्रेमपुर छाय॥ राम राम रटिबो भलो तुलसी खता न खाय। लरिकाईते परिबो धोखे बूड़ि न जाय॥ तुलसी बिलम न कीजिये भजि लीजे रघुबीर। तनतरकसते जात है ज्यों सारिखे तीर॥ रामनाम सुनिरत कुबध आजन भये कुजाति। कुसुम सुरासबन लहत भुवन बिख्याति॥ नामप्रताप साखि सुनु नरकौ तेतिक बात। सरवरपर गिरिवर तरे ज्यों तरवर-के पात॥ ज्ञान गरीबी गुण धरम नरम बचन निरमोष। तुलसी कबहुँ न छाँड़िये शील सत्य सन्तोष॥ अन्न वसन सुत नारि सुख पाछिलुके घर होइ। सन्तसमागम रामधन तुलसी दुर्लभ दोइ॥ तुलसी तीरहिते बसे अवधि पाइये थाह। बेगहि जाय न पाइये सर सरिता अवगाह॥ डग अन्तर सब अगम जल जलनिधि जलसञ्चार। तुलसी करिया कर्मबध बूड़त तरत न बार॥ तुलसी हरि अपमानते होत

अकाज समाज। राज करत रज मिलि गयो सदल सकुल कुरुराज॥ तुलसी मीठे वचनते सुख उपजत चहुँ ओर। वशीकरण यक मन्त्र है परिहरु वचन कठोर॥ रामकृपाते होत सुख रामकृपा बिन जात॥ जानत रघुवर भजनते तुलसी घठ अलसात॥ सनमुख ह्वै रघुनाथके देहु सकल जग पीठि। तजे केचुरी उरगकहँ होत अधिक अति डीठि॥ मरयादा दूरहि रहे तुलसी किये विचार॥ निकट निरादर होत है जिमि सुरसरिवरवार॥ राम कृपानिधि स्वामि मम सब विधि पूरणकाम। परमारथ परधाम वर सन्त सुखद बलधाम॥ रामहि जानहि राम रट भजु रामहि तजु काम। तुलसी राम अजान नर किमि पावहिं परधाम॥ तुलसी पति रति अङ्ग सम सकल साधना सून। अङ्ग रहित कछु हाथ नहिं सहित अङ्ग दश गून॥ तुलसी अपने रामकहँ भजन करहु इक अङ्ग। आदि अन्त निरबाहिबो जैसे नवको अङ्क॥ दुगुणे तिगुणे चोगुणे पञ्च षष्ठओ सात। आठौते पुनि नव गुणे नवके नव रहि जात॥ नवके नव रहि जात हैं तुलसी किये विचार। रमो राम इमि जगतमें नहीं द्वैत विस्तार॥ तुलसी राम सनेह करु त्यागु सकल उपचारु। जैसे घटत न अङ्क नव नवके लिखत पहारु॥ अङ्क अगुण आखर सगुण समुझउ उभय प्रकार। पोये राखे आप भल तुलसी चारु विचार॥ यहि विधिते सब राममय समुझहु सुमतिनिधान। याते सकल विरोध तजु भजु सब समुझु न आन॥ राम कामनाहीन पुनि सकलकामकरतार। याहीते परमातमा अव्यय अमल उदार॥ जो कछु चाहत सो करत हरत भरत गत भेद। काहु सुखद काहू दुखद जानत हैं बुध वेद॥ सन्त कमल मधुमास कर तुलसी बरण विचार। जग सरवर तर भरण कर

जानहु जलदातार॥ एक सृष्टिमहँ जाहि विधि प्रकट तीनि तर भेद। सात्त्विक राजस तम सहित जानत हैं बुध वेद॥ ताविधि रघुवर नाम कहँ वर्त्तमान गुण तीन। चन्द्र भान अपि अमल विधि हरि हर कहहिं प्रवीन॥ अनल रकार अकार रवि जानु मकार मयङ्क। हरी अकार रकार विधि मन महेश निःशङ्क॥ बनन ज्ञानकहँ दहन कर अनल प्रचण्ड रकार। हरि अकार हर मोह तम तुलसी कहहिं विचार॥ त्रिविध ताप हर शशि सतर जानहु परम मकार। विधि हरि हर गुण तीनिको तुलसी नाम अधार॥ भानु कृशानु मयङ्कको कारण रघुवर नाम। विधि हरि शम्भु शिरोमणी प्रणत सकल सुखधाम॥ अगुण अनूपम सगुणनिधि तुलसी जानत राम। करता सकल जगत्तको भरता सब मन काम॥ छत्र मुकुट सम विद्धिअल तुलसी युगल हलन्त। सकल वरण शिरपर रहत महिमा अमल अनन्त॥ रामानुज सदगुण विमल श्याम राम अनुहार। भरता भरत सो जगतको तुलसी लसत अकार॥ राजत राजसतानु जब वर धरणी धर धीर। विधि विहरत अति आशु करि तुलसी जनगण पीर॥ हरण करण सङ्कट सतर समर धीर बलधाम। मा महेश अरिदवनवर लषण अनुज अरि काम॥ राम सदा सम शील घर सुखसागर परधाम। अज कारण अद्वैत गित समतर पद अभिराम॥ होनहार सहजान सब विभव बीच नहिं होत। गगन गिरह करिवो कबे तुलसी पढ़त कपोत॥ तुलसी होत सिखेन हित तम गुण दूषणधाम। भषण सिखिन कवने कह्यो प्रकट विलोकहु काम॥ गिरत अण्ड सम्पुट अरुण जलज पत्र अनयास। अलसुवन उपदेश केहि जात सुउलटि अकास॥ विविध चित्र जल पत्र बिच अधिक नून सम सूर। कब कौने तुलसी

रचे केहि विधि पच्छ मयूर॥ काकसुता गृह ना करे यह अचरज बड़वाय। तुलसी कहि उपदेश सुनि जनित पिता घर जाय॥ सुपथ कुपथ लीन्हे जानत स्व स्वभाव अनुसार। तुलसी सिखवत नाहिं शिशु मूषकहन न मजार॥ तुलसी जानत है सकल चेतन मिलत अचेत। कीट जात उड़ि तिय निकट बिनहिं पढ़े रति देत॥ होनहार सब आपुते वृथा शोच कर जौन। कच्छ मच्छ तुलसी मृगन कहहु उमेठत कौन॥ सुख चाहत सुखमें बसत है सुखरूप विशाल। सन्तत जा विधि मानसर कबहुं न तजत मराल॥ नीति प्रीति यश अयश गति सबकहँ शुभ पहिचान। बस्तो हस्ती हस्तिनी देत न पति रति दान॥ तुलसी अपने दुखदले को कहु रहत अजान। कीश कुन्त अङ्कुर बनहिं उपजत करत निदान॥ यथा धरणि सब बीजमें नखत अकाश निवास। तथा राम सब धर्मसय जानत तुलसीदास॥ पृथुमी पानी पावकहु पवनहु माहँ समात। ता कहँ जानत राम अपि बिनु गुरु किमि लखि जात॥ अगुण ब्रह्म तुलसी सोई सगुण विलोकत सोइ। दुख सुख नाना भांतिको तेहि विरोधते होइ॥ शूर यथा गण जीति अरि पलटि आव चलि गेह। तिमि गति जानहि रामकी तुलसी सन्त सनेह॥ परमातमपद राम पुनि लीजे सन्त सुजान। जे जगमहँ विरचहिं धरे देह विगत अभिमान॥ चौथो संज्ञा जीवको सदा रहत रत काम। ब्रह्मसेतन रामपद निशि वासर बशनाम॥ सुख पाये हरषत हँसत खीझत लहे विषाद। प्रकटत दुरत निरय परत केवल रत विषखाद॥ नाना विधिको कल्पना नाना विधिको सोग। बूचमञ्जो अस्थूल तन कबहुँ तजत नहिं रोग॥ जैसे कुष्ठीको सदा गलित रहत दोउ देह। बिन्दुको गति तै-

सिये अन्तरहू गति एह॥ लिधा देइ गति एक विधि कबहूँ नागति आन। विविध कष्ट पावत सदा निरखहिं सन्त सुजान॥ रामहिं जाने सन्तवर सन्तहि राम प्रमान। सन्त न केवल राम प्रभु रामहिं सन्त न आन॥ ताते सन्त दयाल वर देहि राम धन रीति। तुलसी यह जिय जानिकै करियत हठि अति प्रीति॥ तुलसी सन्त सुअम्बतरु फूलि फरहिं परहेतु। छतते वै पाहन हनैं उलते वै फल देतु॥ दुख सुख दोनों एकसम सन्तनके मनमाहिं। मेरु उदधि गति कङ्कर जिमि भार भीजिबो नाहिं॥ तुलसी राम सुजानको राम जनावै सोइ। रामहिं जाने रामजन आन कबहुँ ना होइ॥ सो गुरु राम सुजासु सम नहीं विषमता लेश। ताकी कृपा कटाक्षते रहे न कठिन कलेश॥ गुरुकहँ तब समझै सुनै निज करतबकर भोग। कह तब गुरु कर तब करै मिटै सकल भवसोग॥ शरणागत तेहि रामके जिन्ह हियधी सियरूप। जा पद पाये पाइये आनँद पद उपदेश। संशय शमन नशाय सब पावै पुनि न कलेश॥ मेधा सीता सम समुझ गुरु विवेक सम राम। तुलसी सिय सम सो सदा भयो विगत मग वाम॥ आदि मध्य अवसान गति तुलसी एक समान। तेई सन्त सरूप शुभ जे अनीत गति आन॥ एई शुद्ध उपासना पराभक्तिकी रीति। तुलसी यहि मग पग धरे रहे रामपद प्रीति॥ तुलसी बिन गुरुदेवके किमि जाने कहु कोय। जहँते जो आयो सो है जाय जहाँ है सोय॥ अपगत ये सोई अवनि सो पुनि प्रकट पताल। कहां जनम अपि मरणमपि समुझहि सुमतिरसाल॥ सङ्ग दोषतते भेद अस मधु मदिरा मकरन्द। गुरु गमते देखहिं प्रकट पूरण परमानन्द॥ डावर सागर कूपगत भेद दिखाई देत। है एकै दूजे नहीं द्वैत आनके हेत॥ गुण-

गत नाना भांति तेहि प्रकटत कालहि पाय। जान जाय गुरु ज्ञानते बिन जाने अरसाय॥ तुलसी तरु फूलत फलत जा विधि कालहि पाय। तैसेही गुण दोषते प्रकटत समय सुभाय॥ दोषहु गुणकी रीति यह जानु अनल गति देखि। तुलसी जानत सो सदा जेहि विवेक सुविशेखि॥ गुरुते आवत ज्ञान उर नाशत सकल विकार। यथा निलय गति दीपके मिटत सकल अंधियार॥ यद्यपि अवनि अनेक सुख तोय तासु रस ताल। सन्तत तुलसी मानसर तदपि न तजहिं मराल॥ तुलसी तोरत तीर तरु मानस जहँ सविडार। विगत नलिनि अलि मलिन जल सर सरिहू बढ़ि आर॥ जो जल जीवन जगत को परसत पावन जोन। तुलसी सो नीचे ढरत ताहि निवारत कोन॥ जो करता है करम को सो भोगत नहिं आन। बवनहार लुनि है सोई देनो लहै निदान॥ रावण रावणको हन्यो दोष रामकहँ नाहिं। निज हित अनहि देखु किन तुलसी आपहिमाहिं॥ सुमिरु राम भजु रामपद देखु राम सुनु राम। तुलसी समुझहु रामकहँ अहनिशि इह तव काम॥ रज अप अनल अनिल नभ जड़ जानत सब कोइ। इह चैतन्य सदा समुझ कारजरत दुख होइ॥ निजकृत बिलसत सो सदा बिन पाये उपदेश। गुरुपगु पाय सुमग धरै तुलसी हरै कलेश॥ सलिल शुक्र शोणित समुझ पल अरु अस्थि समेत। बाल कुमार युवा जरा है सुसमुझ कर चेत॥ ऐसिहि गति अवसानकी तुलसी जानत हेत। ताते यह गति जानि जिय अविरल हरि चित चेत॥ जानै रामस्वरूप जब तब पावै पद सन्त। जन्म मरण पदते रहित सुखमा अमल अनन्त॥ दुखदायक जाने भले सुखदायक भजि राम। अब हमको संसारको सब विधि पूरणकाम॥ आपुहि मदको

पान करि आपुहि होत अचेत। तुलसी विविध प्रकारको दुख उतपति येहि हेत॥ जासों करत विरोध हठि कहु तुलसी को आन। सोत शमन न आन तव नाहक होसि अलान॥ चाहसि सुख जेहि मारिके सो तौ मारि न जाय। कौन लाभ विषते बदलि ते तुलसी विष खाय॥ कोह द्रोह अघमूल है जानत को कहु नाहि। दया धर्म्म कारण समुझि को दुख पावत ताहि॥ बनो बनायो है सदा समुझ रहित नहिं शूल। अरुण बरण केहि कामको बास बिनाको फूल॥

इति द्वितीयः सर्ग्गः॥

जनकसुता दशयानसुत उरग ईश अमजोरि। तुलसि-दास दशपद परखि भवसागर गयो पोरि॥ तुलसी तेरो रोग खर तात मात गुरुदेव। तात जितोहीं उचित अब रुचित आन पद सेव। तर्क विशेषि निषेध पति उर मानसु सुपुनीत। बसत मराल रहित करि तेहि भजु पलटि विनीत॥ शुक्रादिहि कल देहु इक अन्त सहित सुखधाम। दे कमला कल अन्तको मध्य सकल सुखदाम॥ बीज धन-ञ्जय रवि सहित तुलसी तथा मयङ्क। प्रकट तहां नहिं तम तमी समचित रहत सशङ्क॥ रञ्जन कानन कोकनद वंश बिमल अवतंस। गञ्जन पुरहुत अरि सदल जगहित मानस हंस॥ जगते रहु छत्तीस है रामचरण छत्तीन। तुलसी देखु बिचारि हिय है यह मतो प्रवीन॥ कन्दिन दून नचल हनि गनी अनुज तेहि कौन्ह। जेहि हरि कर मनि मान हनि तुलसी तेहि पद लौन्ह॥ शिला आयु मोचक वरण हरण सकल जञ्जाल। भरण करण सुख सिद्धितर तुलसी परम कृपाल॥ मरण बिपति हर धर धरम धराधरण बलधाम। शरण तासु तुलसी चहत बरण अखिल अभिराम॥ विहग

बीच रैयत द्वितय पति पति तुलसी लोर। तासु विमुख सुख पति विषम सपनेहु होत न भोर॥ द्वितिय कोल राजिव प्रथम बाहु न निश्चय साहि। आदि एक कल दे भजहु वेद विदित गुण नाहि॥ बसत जहाँ राघव जलज तेहि मिति गोनहि सङ्ग। भजु तुलसी तेहि अरि सुपद करि उर प्रेम अभङ्ग॥ भजहु तरणिअरि आदिकहँ तुलसी आत्मज अन्त पञ्चानन लहि पदम मधि गहे विमल मन सन्त॥ बनिता शैल सुतासकी तासु जनमको ठाम। तेहि भजु तुलसीदास हित प्रगत सकल सुखधाम॥ भजु पतङ्गसुत आदिकहँ मृत्युञ्जय अरि अन्तु। तुलसी पुहकर यज्ञकर वरण पाँसु-पिच्छन्तु॥ उलटे तासी तासु पति सौ हजार मन सत्य॥ द्वितिय तृतिय हर कास नहिं भजु तेहि तुलसीदास। काका-सन आसन किये सासन लहे उपास॥ आदि द्वितिय अव-तारकहँ भजु तुलसी रूप अन्त। कमल प्रथम अरु मध्य सह वेद विदित मत सन्त॥ जेहि न गन्यो कछु मानसहु सुरपति अरि मौ आस। तेहि पद शुचिता अवधि भव तेहि भजु तुलसीदास॥ नैनकरण गुणधरण वर तावर वरण विचार। चरण सतर तुलसी चहसि उबरन शरणअधार॥ भजु हरि आदिहि वाटिका भरिता राजिव अन्त। करिता पद विश्वास भव सरिता तरसि तुरन्त॥ जड़ मोहन वरणादि-कहँ सह चञ्चल चित चेत। भजु तुलसी संसार अहि नहि गहि करत अचेत॥ मरण अधिप वारण वरण दूसर अन्त अगार। तुलसी इषु सह रागधर तारण तरण अधार॥ ज्यों उरविज चाहसि झटित तौ करि घटित उपाय। सुमन सवर वर अरि-चरण सेवन सरल सुभाय॥ द्वितिय पयोधर परमधन बाग अन्त युत सोय। भजु तुलसी संसार हित याते अधिक न

कोय॥ पति पयोधि पावत पवन तुलसी करहु विचार। आदि द्वितिय अरु अन्तयुत तामत तव निरधार॥ हंस कपट रस सहित गुण अन्त आदि प्रथमन्त। भजु तुलसी तजि वाम-गति जेहि पद रत भगवन्त॥ कना समुझि कवरण हरहु अन्त आदि युत तार। औकर तमहर वरण वर तुलसी सरत उवार॥ अङ्कदशरस आदि युत पाण्डुसूनु सह अन्त। जानि सुवन सेवक सतर करि है कृपा परन्त॥ झटिति सखाहि विचारि हिय आदि वरण हर एक। अन्त प्रथम स्वर दे भजहु जा उर तत्त्व विवेक॥ आदि चन्द्र चञ्चल सहित भजु तुलसी तजु काम। अघगञ्जन रञ्जनसुजन भवभञ्जन सुखधाम॥ विगति देह तनु जासु पति पद रति सहित सनेह। यदि अति मति चाहसि सुगति तदि तुलसी करु प्रेम॥ करता शुचि सुरसरिसुता शशि सारँग महि जान। आदि अन्तसह प्रथम युत तुलसी समुझु न आन॥ गिरिजागति कल आदि इक हरि नचत्र युधि जान। आदि अन्त भजु अन्त पुनि तुलसी शुचि मन मान॥ ऋतुपतिपद पुनि पदि-क युत प्रथम आदि पुर लेहु। अन्त हरण पद द्वितियमहँ मध्य वरण नह नेहु॥ बाहन शेष सुमधु परव भरत नगर युत जान। हरि भरि सरित विपर्य्य करि आदि मध्य अवसान॥ तुलसी उडुगणको वरण बनज सहित दोउ अन्त। ताकहँ भजु संशयशमन रहित एक कल अन्त॥ वारिज वारिज वरण वर वरणत तुलसीदास। आदि आदि भजु आदि पद पाये परम प्रकाश॥ भजु तुलसी कुलिशान्तकहँ सह अगार तजि काम। सुखसागर नागर ललित बली अली परधाम॥ चञ्चल सहि-तरु चञ्चला अन्त अन्त युत ज्ञान। सन्त शास्त्र सम्मत समुझि तुलसी करु परमान॥ आदि वसन्त इकार दै आशय ता-

सु विचार। तुलसी तासु शरण परे कासु न भयो उबार॥ धरा धराधर वरण युग शरण हरण भवभार। करन सतर तर परम पद तुलसी परमाधार॥ वरन धनञ्जय सूनुपति चरण शरण रति नाहि। तुलसी जगवञ्चक विहठि किये विधाता ताहि॥ तुलसी रजनी पूर्णिमा हार सहित लखि लेहु। आदि अन्त युत जानि कहि तुलतरसनलसनेहु॥ भानु गोत्र तिमि तासु पति कारण अति हित जाहि। ज्ञान सुगति युत सुखसदन तुलसी मानत ताहि॥ भजु तुलसी औघादिकहँ सहित तत्त्व युत अन्त। भव आयुर्जय जासुबल मन चल अचल करन्त॥ देत कहा नृप काजपर लेत कहा दूत राज। अन्त आदि युत सहित भजु जो चाहसि शुभ काज॥ चन्द्ररवसि भजु गुण सहित समुझि अन्त अनुराग। तुलसी जो यह बन परै तौ तव पूरण भाग॥ जिनके हरि वाहन नहीं दधिसुत सुत जेहि नाहिं। तुलसीते नर तुच्छ हैं विना समीर उड़ाहिं॥ रवि चञ्चल अरु ब्रह्म द्रव बीच सुबास विचारि। तुलसि-दास आसन करे अवनिसुता उर धारि॥ बन वनिताहगकी-पमा युत कण सहित विवेक। अन्त आदि तुलसी भजहु परि-हरि मत कर टेक॥ उर्वी अन्तहु आदि युत कुल शोभो कम-लादि। कै विपर्य्य ऐसेहि भजहु तुलसी शमन विषाद॥ तौ तोहिकहं सब कोउ सुखद करहि कहा तव पाँच। हरव तृतिय वारिज वरण तजव लीन सुनु साँच॥ तजहु सदाशुभ आशअरि भजु सुमनस अरिकाल॥ सजु मतदेश अवन्तिका तुलसी विमल विशाल॥ एतवन्त वरवरणयुग सेत जगत सब जान। चेत सहित सुमिरण करत हरत सकल अघखान॥ मैत्रीवरणय-कारको सहसर आदि विचारि। पञ्चवर्ग गहियुत सहित तुलसी ताहि सँभारि॥ हलयम मध्य समानयुत याते अधिक न आन॥

तुलसी ताहि बिसारि शठ भरमत फिरत भुलान॥ कौन जाति सीतासती को दुखदायक बाम। को कहिये शशिकर दुखद सुखदायक को राम॥ को शङ्कर गुरुवागवर शिवहरको अभिमान करताको अजजगतको भरताको हरिजान॥ सरलेय सरजीव-गुण करु तेहि दृढ़पहिचान। पञ्चवर्ग गहि युतसहित तुलसी ताहि समान॥ होत हरष का पाय धन विपति तजे का धाम॥ दुखदा कुमति कुनारि तर अति सुखदायक राम॥ बीर कवन सह मदनशर धीर कवन रतराम। कवन क्रूर हरिपदविमुख को कामी वशबाम॥ कारण को कंजीव को खंगुण कह सब कोय। जानतको तुलसी कहत सो पुनि आवन होय॥ तुलसी वरण बिकल्पको औचप द्वितिय सखेत॥ अब समुझे जड़ सरि-त नर समुझे साधु सचेत॥ जासु आसु सरदेवको अरु असार हरु वाम। सकल दुखद तुलसी तजहु मध्य तासु सुखधाम॥ चञ्चल तियभजु प्रथम हरि जो चाहसि परधाम। तुलसी कहहि सुजन सुनहु यही सयानप काम॥ कुलिशधर्म्म युग अन्तयुत भजु तुलसी तजु काम॥ अशुभहरण संशयशमन सकल कला गुणधाम॥ श्रीकरको रघुनाथहर अनयश कह सब कोय। सुख-दाको जानत सुमति तुलसी समतादोय॥ वैरमूलहित हरवचन प्रेममूल उपकार। दोहा सरल सनेहमें तुलसी करै विचार॥ प्राग कवन गुरु लघु जगत तुलसी और न आन। श्रेष्ठाको हरि-भक्तिसम को लघु लोभ समान॥ चरण द्वितिय नाशक निरय तुलसी अन्तरसार। भजहु सकल श्रीकरसदन जनपालक खल-सार॥ चपश्रेय सस्वर सहित यमयुत दुखद न आन। तुलसी हलयुतते कुशल अन्तिकार सहजान॥ तुलसी यमगण बोध बिन कहु किमि मिटै कलेश। ताते सदगुरुशरण गह जाते पद-उपदेश॥ भगण जगण कासों करसि रामश्रयन नहिं कोय।

तुलसी पतिपहिचान बिन कोउ तुलकबहुँलहोय॥ तुलसी तगण-विहीन नर सदा नगणके बीच। तिनहिं जगण कैसे लहै परे सगणके बीच॥ इन्द्ररमणि सुरदेव ऋषि रुक्मिणिपति शुभ जान। भोजनदुहिता काक अलि आनँद अशुभ समान॥ को हित सन्त अहित कुटिल नाशकको हित लोभ। पोषक लोषक दुखद अरि शोषक तुलसी क्षोभ॥ सदा नगण पद प्रीति यहि जानु नगण सम ताहि। जगण ताहि जययुत रहत तुलसी संशय नाहि॥ भगण भक्ति करु भरम तजि तगण सगण विधि होय। सगण सुभाय ससुझि तजो भजे न दूषण कोय॥ श्रीगज आसनजुतजू विहरत तीर सुधीर। यज्ञ पाय मैत्राणपद राजत श्रीरघुवीर॥ बाणद्युतजू तट निकट विहरत रामसुजान। तुलसी करकमलन ललित लसत शरासन बान॥ मृदुसेचक शिरुह रुचिर शीशतिलक भ्रूवङ्क। धनुशर गहि जनु तहितयुत तुलसी लसत मयङ्क॥ हंस कमल बिच वरणयुत तुलसी अतिप्रिय जाहि। तीनलोकमहँ जो भजे लहै तासु फल ताहि॥ आदि महै अन्तहु महै मध्य रहै तेहिजान। अनजाने जड़जीव सब ससुझै सन्तसुजान॥ आदि रहै मध्ये रहै अन्त दहै सो बात। रामविमुखके होत है रामविमुखते जात॥ ललित चरण कटि कर लक्षित लसत ललित बनमाल। ललित-चिबुक द्विज अधरसह लोचन ललित विशाल॥ भरणहरणअर्थ-अमल सहित विकल्पविचार। कह तुलसी मति अनुहरत दोहा अर्थ अपार॥ वशिष्ठादिलङ्कारमहँ सङ्केतादि सुरीति॥ कहे बहुरि आगे कहब समुझब सुमतिविनीति॥ कोष अलङ्कृत सन्धि गति मैत्रीवरण विचार। हरण भरण सुविभक्ति भल कविहि अर्थ निरधार॥ देशकाल करताकरम बुधि विद्यागतिहीन। ते सुरतरु तर दारदो सुरसरितीर मलीन॥ देशकाल गतिहीन जे

करताकर मनज्ञान । तेपिमर्थ मगु पगुधरहिं तुलसी प्रवान समान अधिकारी सब वोसरी भलोजानिबो मन्द । सुधासदन बसुबारहो चौथी अथवाचन्द ॥ नरवर नभ सरवर सलिल विनय बनज विज्ञान । सुमति शुक्तिका शारदा स्वातो कहँहिं सुजान ॥ शम दम समता दीनता दानदयादिक रीति । दोषदुरित हरदर दरउ रवरविविमल विनीति ॥ धरमधुरीण सुधीरधर धारनवरपर-पीर । धराधरा धरसम अचल बचन न बिचल सुधीर ॥ चौंतिस-के प्रस्तारमें अर्थभेद परमान । कहहु सुजन तुलसी कहहिं या विधिते पहिचान ॥ बेद विषम कवरण सतर सुतर रामकी रीति। तुलसी भरत न भरिहरत भूलि हरहु जनि प्रीति ॥ बनते गुण-कहँ जानिये ताते दगदिग तीन । तुलसी यह जिय समुझिकरि जगजित सत्त प्रवीन ॥ चन्द्रअनल नहिं है कहूँ झूठो विना विवेक । तुलसीते नर समुझि हैं जिनहिं ज्ञानरस एक ॥ सतसैया तुलसी सतर तमहर परपर देत । तरित अविद्या जनदुरित वर-तुलसम करि लेत ॥

इति तृतीयः सर्ग्गः ३ ॥

त्रिविध भीतिको शब्द वर विखटन लट परसान । कारण अविरल अल पियत तुलसी अविध भुलान ॥ दिगभ्रम जा विध होत है कोन भुलावत ताहि । जानि परत गुरु ज्ञानते सब जग संशय माहि ॥ कारण चारि विचारु वर वरणन अपर न आन । सदा सोउ गुण दोषमें लखि न परत गुण ज्ञान ॥ इह करतब सब ताहिको यहिते यह परमान । तुलसी मर-ण न पाइ हो बिन सदगुरु वरदान ॥ दिगभ्रम कारण चार ते जानहिं सन्त सुजान । ते कैसे लखि पाइ हैं जे वहि विषम भुलान ॥ सुख दुख कारणसा भयो रसनाको सुत वीर ।

तुलसी सो तब लखि परै करै कृपा वरधीर॥ अपने खोदे कूपमहँ गिरे यथा दुख होइ। तुलसी सुखद समुझि हिये रचत जगत सब कोय॥ ता विधिते अपनो विभव दुख सुख दे करतार। तुलसी कोउ कोउ सन्त वर कीन्हे विरचि विचार॥ रसनाहीके सुत उपर करत करनतर प्रीति। तेहि पाछे जग सब लगे समुझ न रीति अरीति॥ माया मन जिव ईश भणि ब्रह्मा विष्णु महेश। सुर देवी औ ब्रह्मलौं रसना सुत उपदेश॥ करणधार वारिधि अगम को गम करै अपार। जन तुलसी सतसङ्गबल पाये विशद विचार॥ गहि सुवेल विरले समुझि वहि गय अपर हजार। कोटिन बूड़े खबरि नहिं तुलसी कहहिं विचार॥ अब न सुनत देखत नयन तुलत न विविध विरोध। कहहु कहौ केहि मानिये केहि विधि करिय प्रबोध॥ अवर्णात्मक ध्वन्यात्मक वर्णात्मक विधि तीन। त्रिविध शब्द अनुभव अगम तुलसी कहहिं प्रवीन॥ कहत सुनत आदिहि वर्ण देखत वर्णविहीन। दृष्टिमान चर अचरगण एकहि एकन लीन॥ पञ्च भेद चरगण विपुल तुलसी कहहिं विचारि। नर पशु स्वेदज खगज खग कृमि बुध मत निरधारि॥ अति विरोध तिनमहँ प्रचल प्रकट परत पहिचान। अस्थावर गति अपर नहिं तुलसी कहहिं प्रमान॥ रोम रोम ब्रह्माण्ड बहु देखत तुलसीदास। बिन देखे कैसे कोऊ सुनि मानै विश्वास॥ वेद कहत जहँलगि जगत तेहिते अलग न आन। तेहि अधार व्यवहरत लखु तुलसी परम प्रमान॥ सरषप सूक्ष्म जासुकहँ ताहि सुमेरु असूझ। कहेउ न समुझत सो अबुध तुलसी विगत विसूझ॥ कहत अवर समुझत अवर गहत तजत कछु और। कहेउ सुनै समुझत नहीं तुलसी अति मतिबौर॥ देखो करै अदेख द्रव अनदेखो विश्वास। कठिन प्रबलता

मोहकी जलकहँ परम पियास॥ सोई सेमर सोइ सुवा सेवत पाइ बसन्त। तुलसी महिमा मोहकी विदित बखानत सन्त॥ सुन्यो सबन देख्यो नयन संशय शमन समान। तुलसी समता असमभव कहत आनकहँ आन॥ बसहा भव अरि हित अहित सोपि न ससुझात हीन। तुलसी दीन मलीनमति मानत परम प्रवीन॥ भटकत पर अद्वैतता अटकत ज्ञान गुमान। सटकत विलरनते विहटि फटकत तिमु अभिमान॥ जो चाहत तेहि बिनु दुखित सुखित रहित तेहि होइ। तुलसी सो अतिशय अगम सुगम रामते सोइ॥ मात पिता निज बालकहि करहिं इष्ट उपदेश। सुनि माने विधि आप जेहि निज शिर सहे कलेश॥ सबसों भलो मनाइबो भलो होनको आस। करत गगनके गेडुआ सो शठ तुलसीदास॥ विलिमिसु देखत देवता करणी समता देव। सुये मार अविचार-रत स्वारथ सावक एव॥ बिनहिं बीज तरु एक भव शाखा दल फल फूल। को वरणै अतिशय अमित सब विधि अकल अतूल॥ शुक पिक मुनिगण बुध विबुध फल आश्रित अति दीन। तुलसी ते सब विरदहित सो तरु तासु अधीन॥ को नहिं सेवत आय भव को न सेय पछताय। तुलसी बादहि पचत है आपहि आप नशाय॥ कहत विविध फल विमल तेहि वहत न एक प्रमान। भरम प्रतिष्ठा मानि मन तुलसी कथत भुलान॥ मृगजल घट भरि विविध विधि सींचत नभ-तरुमूल। तुलसी मन हरषित रहत बिनहिं लहे फल फूल॥ सोपि कहहिं हमकहँ लह्यो नभतरुको फल फूल। ते तुलसी तिनते विमल सुनि मानहिं सुद मूल॥ तेपि तिन्हें याचहिं विनय करि करि बार हजार। तुलसी गाडरको ढरन जाने जगत विचार॥ शशि कर सग रचना किये कत शोभा सर-

सात। स्वर्ग सुमन अवसन्त खलु चाहत अचरज बात॥ तुलसी बोल न बूझई देखत देखन जोय। तिन शठके उपदेश-का करब सयाने कोय॥ जो न सुनै तेहि का कहिय कहा सुनाइय ताहि। तुलसी तेहि उपदेशही तासु सरिस मति जाहि॥ कहत सकल घट राममय तौ खोजत केहि काज। तुलसी कह इह कुमति सुनि उर आवत अति लाज॥ अलख कहहिं देखन चहहिं ऐसे परम प्रवीन। तुलसी जग उपदेशही बनि बुध अबुध मलीन॥ हहरत हारत रहित विद रहत धरे अभिमान। ते तुलसी गुरु आव नहिं कहि इतिहास पुरान॥ निज नैनन दीसत नहीं गही आँधरे बाह। कहत मोहबश तेहि अंधम परम हमारे नाह॥ गगनवाटिका सींचही भरि भरि सिन्धुतरङ्ग। तुलसी मानहिं मोद मन ऐसे अधम अभङ्ग। दषद करत रचना विहरि रङ्ग रूप सम-तूल। विहग वदन विष्ठा करे ताते भयो न तूल॥ चाह ति-हारो आपते मानन आनन आन। तुलसी करु पहिचान पति याते अधिक न आन॥ आतमबोध विचार इह तुलसी करु उपकार। कोउ कोउ रामप्रसादते पावत परमतपार॥ जहां तोष तहँ राम हैं राम तोष नहिं भेद। तुलसी देखि गहत नहीं सहत विविध विधि खेद॥ गोधन गजधन बाजिधन और रतनधनखान। जब आवै सन्तोषधन सब धन धूरि समान॥ कुथि रति अटत विमूढ़ लट घट उदघटत न ज्ञान। तुलसी रटत हटत नहीं अतिशय गति अभिमान॥ भृकुवङ्ग गत दाम भुव काम न विविध विधान। तो तन वर्त्तमान यत तत तुलसी परमान॥ भो उर सुक्ति विभव पढ़ि मनगत प्रकट लखात। मन भो उर अति सुक्तिते बिलग बिजानब तात॥ रामचरण पहिचान बिनु मिटो न मनको दौर।

जन्म गँवाये बादही रटत पराये पौर॥ सुनै वरण भानै वरण वरण बिलग नहिं ज्ञान। तुलसी सुगुरुप्रसाद बल परै वरण पहिंचान॥ बिटप बेलिगण बागके मालाकार न जान। तुलसी ता विधि बिद बिना करता राम भुलान॥ करतब ही सो कर्म है कहँ तुलसी परमान। करणहार करतारसो भोगै कर्म निदान॥ तुलसी लट पढ़ते मटक अटक अपित नहिं ज्ञान। ताते गुरु उपदेश बिनु भरमत फिरत भुलान॥ ज्यों बरदा बनिजारके फिरत घनेरे देश। खाँड़ भरे भुस खात हैं बिन गुरुके उपदेश॥ बुध्वा वैरन अनय पद भ्रपिन पदारथ लीन। तुलसी तेहि रासभ सरिस निज मन गणहि प्रवीन॥ कहत विविध देखे बिना गहत अनेक न एक। ते तुलसी सोनहिं सरिस बाणी बदहिं अनेक॥ बिन पाये परतीत अति करत यथारथ हेत। तुलसी अबुध अकाश दूत भरि भरि मूठी लेत॥ बसन बारि बाँधत बिहठि तुलसी कौन विचार। हानि लाभ विधि वाध बिनु होत नहीं निरधार॥ काम क्रोध मद लोभकी जबलगि मनमें खान। का पण्डित का मूरख दोनों एक समान॥ इत कुलकी करणी तजे उत न भजे भगवान। तुलसी अधवरके भये ज्यों बधूरको पान॥ कौर सरिस बाणी पढ़त चाखन चाहत खाँड़। मन राखत वैराग-महँ धरमों राखत राँड़॥ रामचरण परचै नहीं बिन साधन पद नेह। मूँड़ मुड़ाये बादहीं भाँड़ भये तजि गेह॥ काह भयो बन बन फिरे जो बनि आयो नाहिं। बनते बनते बनि गयो तुलसी घरहीमाहिं॥ जो गति जानै वरणकी तन गति सो अनुमान। बरण बिन्दु कारण यथा तथा जानु नहिं आन॥ वरण योग भव नाम जग जानु भरमको मूल। तुलसी करता है तुही जानु मानु जनि भूल॥ नाम जगत सम समुझ जग

वस्तु न करि चित वैन। विन्द गये जिमि गैनते रहत ऐनको ऐन॥ आपुहि ऐन विचारु विधि सिद्धि विमल गति मान। आन वासना विंदुसम तुलसी परम प्रमान॥ धन धन कहे न होत कोउ समुझि देखु धनमान। होत धनिक तुलसी कहत दुखित न रहत जहान॥ हिमकी मूरतिके हिये लगत नीरकी प्यास। लगत शब्द गुरु तरनिकर सोमैं रही न आस पाके उरवर वासना भई भाष कछु आन। तुलसी ताहि विडम्बना कहि विधि कथहि प्रमान॥ रुजत न भव परचै विना भेषज करि किमि कोय। जान परै भेषज करै सहज नाश रुज होय॥ मानस व्याध कुचाह तव सदगुरु वैद समान। जासु वचन अलवल अवल होत सकल रुज हान॥ रुचि बाढ़े सतसङ्गमहँ नीति क्षुधा अधिकाय। होत ज्ञानबल पीन अल वृजिन विपति मिटि जाय॥ शुक्लपक्ष शशि स्वच्छमो कृष्णपक्ष द्युतिहीन। वढ़त घटत विधि भाँति विचि तुलसी कहहिं प्रवीन॥ सतसङ्गति सितपक्ष सम असित असन्त प्रसङ्ग। जानु आपकहँ चन्द्र सम तुलसी वदन अभङ्ग॥ तीरथपति सतसङ्ग सम भक्ति देवसरि जान। विधि उलटी गति रामकी तरणिसुता अनुमान॥ वर मेधा मानहु गिरा धीर धर्म्म नयोध। मिलन त्रिवेणी मनहरणि तुलसी तजहु विरोध॥ समकव सव मज्जन विशद मल अनीत गद धोय। अवश मिलन संशय नहीं सहज रामपद होय॥ क्षेम विमल वाराणसी सुरअपगा सम भक्ति। ज्ञानविश्वेश्वर अति विशद लसत दया सह शक्ति॥ बसत क्षेम गृह जासु मन वाराणसी न दूरि। विलसित सुरसरि भक्ति जहँ तुलसी नय कृत भूरि॥ सित काशी मगहर असित लोभ मोह मद काम। हानि लाभ तुलसी समुझि बास करहु वसुयाम॥ गये पलटि आवे

नहीं है सो करु पहिचान। आजु जेइ सो काल है तुलसी भरम न मान॥ वर्त्तमान आधीन दोउ भावी भूत विचार। तुलसी संशय मनन करु जो है सो निरुआर॥ मानस उर वर मम मधुर रामसुयश शुचिनीर। उठेउ वृजिन बुधि मल भई बुधि नहिं अगम अधीर॥ अलङ्कार कवि रीति युत भूषण दूषण रीति। वारिजात वरणत विविध तुलसी विमल विनीति॥ विनै विचार सुहिर्दता सो पराग रस गन्ध। कामादिक तेहि सरल सत तुलसी घाट प्रबन्ध॥ प्रेम उमँग कवितावली चली सरित शुचिधार। राम वरावरि मिलन हित तुलसी हरष अपार॥ तरल तरङ्ग सुछन्द वर हरत द्वैत तरु मूल। वैदिक लौकिक विधि विमल लसत विशदवर कूल॥ सन्तसभा विमला नगरि सिगरि सुमङ्गलखानि। तुलसी उर सुरसरिसुता लसत सुथल अनुमानि॥ मुक्त सुमुक्त सुर विषद श्रोता विविध प्रकार। ग्राम नगर पुरयुग सुतट तुलसी कहहिं विचार॥ वाराणसी-विराग नहिं शैलसुता मन होय। तिमि अवधहि सरयु न तजै कहत सुकवि सब कोय॥ कहब सुनब समुझब पुनः सुनि समुझायब आन। अमहर घाट प्रबन्धवर तुलसी परम प्रमान॥

इति चतुर्थःसर्गः॥ ४॥

यतन अनूपम जानु वर सकल कला गुणधाम॥ अविनाशी अब यह अमल भो यह तनु धरि राम॥ सदा प्रकाश सरूपवर अस्ति न अपर न आन। अप्रमेय अद्वैत अज याते दुरत न ज्ञान॥ जानहिं हंसा रसमकहँ तुलसी सन्त न आन। जाकी कृपा कटाक्षते पाये पदनिर्वान॥ तजत सलिल अपि पुनि गहत घटत बढ़त नहिं रीति। तुलसी यह गति उर निरखि करिय रामपद-

प्रीति ॥ चुम्बक हरहन सेति जिम सन्तन हरि सुखधाम। जान तिरीचर सम लफरि तुलसी जानत राम ॥ भरत हरत दरशत लवहिं पुनि अदरश सबकाहु ॥ तुलसी सुगुरु प्रसादवर होत परमपद लाहु ॥ यथा प्रत्यक्ष सरूप बहु जानत है सब कोय ॥ तथाहि लै गतिको लखब असमच्छप अति सोय ॥ यथा सकल अपि जात अप रविमण्डलके माहिं। मिलत तथा जिव रामपद होत तहांले नाहिं ॥ कर्मकोष सँग लै गयो तुलसी अपनी बानि। जहां जाय बिलसे तहां परे कर्म पहिचानि ॥ ज्यों धरणीमहँ हेतु सब रहत यथा धरि देह। त्यों तुलसी लै राममहँ मिलत कबहुँ नहिं एह ॥ शोषक पोषक समुझ शुचि राम प्रकाशसरूप। यथा तथा विन देखिये जिमि आदरश अनूप ॥ कर्म मिटाये मिटत नहिं तुलसी किये विचार। करतब हीके फेर है या विधि सार अधार ॥ एक किये हो दूसरो बहुरि तीसरो अङ्ग। तुलसी कैसेहु ना नशै अतिशय कर्म तरङ्ग ॥ इन दोउनते रहत भो कोउ न राम तजिआन। तुलसी यह गति जानिहै कोउकोउ सन्तसुजान ॥ सन्तनको लै अभिसदन समुझहि सुगति प्रवीन। कर्मविपर्यय कबहुँ नहिं सदा रामरसलीन ॥ सदा एकरस सन्त सिय निश्चय निशिकर जान ॥ रामदिवाकर दुखहरण तुलसी शीलनिधान ॥ सन्तनकी गति उरविजा जानहु शशि परनाम। रमित रहत रसमैं सदा तुलसी रति नहिं आन ॥ जातरूप जिमि अनल मिलि ललित होत लन आन॥ सन्तशील कर सीय तिमि लसहि रामपद पाय ॥ आपुहिं बाँधत आपु हठि कौन छुड़ावत ताहि ॥ सुखदायक देखत सुनत तदपि सो मानत नाहि ॥ जौन तारते अधम गति उर्द्ध तौन गति जात। तुलसी मकरीतन्त इव कर्म न कबहुँ नशात ॥ जहां रहत तहँ सह सदा तुलसी तेरी बानि। सुधरै विधिवश होय जब सतसङ्गति पहिचानि। रवि रजनीश घरातथा

इह अस्थिर अस्थूल। सूक्ष्म गुणको जीवकर तुलसी सो तन-मूल" आवत अपर बिते यथा जात तथा रविमाहिं॥ जहँते प्रकटत ही दुरत तुलसी जानत ताहि। प्रकट भये देखत सकल दुरत लखत कोइ कोय। तुलसी यह अतिशय अगम बिन गुरु सुगम न होय। या जग जे नयहीन नरबरबस दुखमग-जाहि। प्रकटत दुरत महादुखी कहँलगि कहियत ताहि॥ सुखदुख मग अपने गहे मगकेहु गहत न धाय। तुलसी राम-प्रसाद बिनु सो किमि जानो जाय। महिते रवि रविते अवनि सपनेहुं दुख कहुं नाहिं। तुलसी तबलगि दुखित अति शशिम-गु लहत न ताहि॥ सन्तनकी गति शीतकर लेश कलेश न होय। सो सियपद सुखदा सदा जानु परमपद सोय॥ तजत अमिय शशि जानि जग तुलसी देखत रूप। गहत नहीं सबकहँ विदित अतिशय अमल अनूप॥ शशिकर सुखद सकल जगत को तेहि जानत नाहिं। कोक कमलकर दुखदकर तदपि दुखद नहिं ताहि॥ बिन देखे समुझे सुने सोउ भो मिथ्यावाद। तुलसी गुरु गमकै लखे सहजहि मिटे विषाद॥ वरषि विश्व हरषित करत हरत ताप अघप्यास। तुलसी दोष न जलदकर त्यों जड़ करत जवास॥ चन्द्र देत अमि लेत विष देखहु मनहिं बिचार। तुलसी तिमि सिय सन्तवर महिमा विशद अपार॥ रसम विदित रवि रूप लखु शीत शीतकर जान। लसत योगयशकार भव तुलसी समझ समान॥ लेति अवनि रविअंशकहँ देति अमिय अपसार। तुलसी सूक्ष्मको सदा रवि रजनीश अधार॥ भूमि भानु अस्थूलअप सकल चराचर रूप। तुलसी बिन गुरु ना लहै यह मत अमल अनूप॥ तुलसी जे लयलीन नर ते निशिकर तन-लीन। अपर सकल रविगत भये महाकष्ट अतिदीन॥ तुलसी कवनेहुं योगते सतसङ्गति जब होय। राम मिलन संशय नहीं

कहहिं सुमति सब कोय॥ सेवक पद सुखकर सदा दुखद सेव्य-पद जान। यथा विभीषण रावणहि तुलसी समुझ प्रमान॥ शीत उष्णकर रूपयुग निशिदिन कर करतार। तुलसी तिन-कहँ एक नहिं निरखहु करि निरधार॥ नहिं नैनन काहू लख्यो धरत नाम सब कोय। ताते साँचो है समुझ झूँठ कबहुँ नहिं होय॥ वेद कहत सब कोउ विदित तुलसी अमिय स्वभाव। करत पान अपि रुज हरत अविरल अमल प्रभाव॥ गन्ध शीत अपि उष्णता सबहि विदित जग जान। महिवन अनल सुआनि लग बिन देखे परमान॥ इनमहँ चेतन अमलअल विलखत तुलसीदास। सो पद गुरुउपदेश सुनि सहज होत परकास॥ यहि विधिते वर बोध इह गुरु प्रसाद कोउ पाव। हैं ते अल तिहुँ कालमहँ तुलसी सहज प्रभाव॥ काकसुतासुत-वासुता मिलत जननि पितु धाय। आदि मध्य अवसान गत चेतन सहज सुभाय॥ समता स्वारथहीनते होत न विशद वि-वेक॥ तुलसी यह तिनहीं फबै जिनहिं अनेक न एक॥ सब स्वा-रथ स्वारथ रटत तुलसी घटत न एक। ज्ञानरहित अज्ञानरत कठिन कुमनकर टेक॥ स्वारथ सो जानहु सदा जासों विपति नशाय। तुलसी गुरुउपदेश बिन सो किमि जानो जाय॥ कारज स्वारथ हित करे कारण करे न होय। मनवा ऊषविशेषते तुलसी समझहु सोय ५०॥ कारण कारज जानता सबकाहू पर-मान। तुलसी कारजकारजो सो तैं अपर न आन॥ विन करता कारज नहीं जानत हैं सब कोय। गुरुमुख श्रवण सुनत नहिं प्राप्ति कवन विधि होय॥ करता कारण कारजहु तुलसी गुरु पर-मान। लोपत करता मोहबश ऐसो अबुध मलान॥ अनिल सलिल विधियोगते यथा बीचि बहु होय। करत करावत नहिं कछुक करता कारण सोय॥ क्षेम धरण करतार कर तुलसी

पति परधाम। सो वरतरता समन कोउ सब विधि पूरण-काम॥ करता कारण सारपद आवै अमल अभेद। कर्म घटत अपि बढ़त हैं तुलसी जानत वेद॥ स्वेदज जवन प्रकारते आपु करै कोउ नाहि। भये प्रकट तेहिके सुनौ कौन विलोकत ताहि॥ भयो विषमता कर्म महँ समता किये न होय। तुलसी समता समुझ कर सकल मान मद धोय॥ समहित सहित समस्त जग सुहृद जान सबकाहु। तुलसी यह मत धारु उर दिन प्रति अति सुख लाहु॥ यह मनमहँ निश्चय धरहु है कोउ अपर न आन। कासन करत विरोध हठि तुलसी समुझ प्रमान॥ महि जल अनल सुअनिल नभ तहां प्रकट तव रूप। जानि जाय वर बोधते अति शुभ अमल अनूप॥ जोपै आकसमातते उपजे बुद्धि विशाल। नातो अति छलहीन है गुरुसेवन कछु काल॥ कारज युग जानहु हिये नित्य अनित्य समान। गुरु गमते देखहि सुजन कह तुलसी परमान॥ महि मयङ्क अहिनाथको आदि ज्ञान भो भेद। ता विधि तेई जीवकहँ होत समुझ विन खेद॥ परो फेर निज कर्म महँ भ्रम भवका यह हेत॥ तुलसी कहत सुजन सुनहु चेत न समुझ अचेत॥ नामकार दूषण नहीं तुलसी किये विचार। कर्मनकी घटना समुझि ऐसे वरण उचार॥ सुजन कुजन महि गत यथा तथा भानु शशिमाहिं। तुलसी जानत हो सुखी होत समुझ विन नाहिं॥ मातु तात भवरीति जिमि तिमि तुलसी गति तोरि। मात न तात न जानु तव है तेहि समुझ बहोरि॥ सर्व सकल तैं है सदा विश्वेषित सब ठौर। तुलसी जानहिं सुहृद जे ते अति मति शिरमौर॥ अलङ्कार घटना कनक रूप नाम गण तीन। तुलसी रामप्रसादते परसुहिं परमप्रवीन॥ एक पदारथ

विविध गुण संज्ञा अगम अपार। तुलसी सुगुरुप्रसादते पाये पद निरधार॥ गन्ध न मूल उपाधि बहु भूषण तन गण जान। शोभा गुण तुलसी कहहिं समुझहिं सुमतिनिधान॥ जैसो जहां उपाधि तहँ घटित पदारथ रूप। तैसो तहां प्रभा समन गुणगण सुमति अनूप॥ जानु वस्तु अस्थिर सदा मिटत मिटाये नाहिं। रूप नाम प्रकटत दृस्त समुझि विलोकहु ताहि॥ पेष रूप संज्ञा कहब गुण सुविवेक विचार। इतनोई उपदेश वर तुलसी किये विचार॥ सदा सगुण सीता रमण सुखसागर बलधाम। जन तुलसी परखे परम पाये पद विश्राम॥ सगुण पदार्थ एक नित निर्गुण अमित उपाधि। तुलसी कहहिं विशेषते समुझ सुमति सुठि साधि॥ यथा एकमहँ वेद गुण तामहँको कहु नाहिं। तुलसी वर्त्तत सकल हैं समुझत कोउ कोउ ताहि॥ तुलसी जानत साधुजन उदय अस्तगत भेद। बिन जाने कैसे मिटै विविध जनन जन खेद॥ संशय शोक समूल रुज देत अमित दुख ताहि। अहि अनुगत सपने विविध चाहि परायण जाहि॥ तुलसी सांचो आप है जब लगि खुलैं न नैन। सो तबलगि जबलगि नहीं सुने सुगुरुवर बैन॥ पूरण परमारथ दरश परशत जौलगि आश। तौलगि खन उत्थान नद जबलगि जल न प्रकाश॥ तबलगि हमते सब बड़ो जबलगि है कछु चाह। चाहरहित कह को अधिक पाय परमपद थाह॥ कारण करता है अचल अपि अनादि अजरूप। ताते कारज विपुलतर तुलसी अमल अनूप॥ करता जानि न परत है बिन गुरुवरपरसाद। तुलसी निज सुख विधि रहित केहि विधि मिटै विषाद॥ मृण्मय घट जानत जगत बिन कुलाल नहिं होय। तिमि तुलसी करता रहित कर्म करै कहुँ कोय॥ ताते करता ज्ञान कर जाते

कर्म प्रधान। तुलसी ना लखि पाइ हौ किये अमित अनुमान॥ अनुमान साचो रहित होत नहीं परमान। कह तुलसी प्रत्यक्ष जो सो कहु अपरको आन॥ मिति कारण करता सहित कारज किये अनेक। जो करता जाने नहीं तौ कहु कवन विवेक॥ स्वर्णकार करत्ता कनक कारण प्रकट लखाय। अलङ्कार कारज सुखद गुण शोभा सरसाय॥ चामीकर भूषण अमित करता कह तब भेद। तुलसी जे गुरु गमरहित ताहि रमित अति खेद॥ तन निमित्त जहँ जो भयो तहां सोइ परमान। जिन जाने माने तहां तुलसी कहहिं सुजान॥ मृण्मय भाजन विविध बिधि करता मन भव रूप। तुलसी जानेते सुखद गुरु गम ज्ञान अनूप॥ सब देखत मृण भाज नहिं कोइ कोइ लखत कुलाल। जाके मनके रूप वह भाजन विलखु बिशाल॥ एकै रूप कुलालको माटी एक अनूप। भाजन अमित विशाल लघु सो करता मन रूप॥ जहां रहत वरतत तहां तुलसी नित्य स्वरूप। भूत न भावी ताहि कह अतिशय अमल अनूप॥ श्वास समीर प्रत्यक्ष अप स्वच्छा दरश लखात। तुलसी रामप्रसाद बिन अबिगति जानि न जात॥ तुलसी तल रहि जात है युग तन अचल उपाधि। यह गति तेहि लखि परत जेहि भई सुमति शुठि साधि॥ करता कारण कालके योग करम मत जान। पुनःकाल करता दुरत कारण रहत प्रमान॥

इति पञ्चमः सर्गः॥ ५॥

जल थल तन गत है सदा ते तुलसी तिहुँ काल। जन्म मरण समुझे बिना भाषत समन विशाल॥ तैं तुलसी करता सदा कारण शब्द न आन। कारण संज्ञा सुख दुखद बिन गुरु तेहि किमि जान॥ कारजरत करता समुझ दुख सुख भोगत सोय। तुलसी श्री गुरुदेव बिन दुखप्रद दूर न होय कारण शब्द स्वरूपमें संज्ञा गुण भव जान। करता सुरगुरुते सुखद तुलसी अपर न आन॥ गन्ध विभावरि नीर रस सलिल अनल गत ज्ञान। वायुवेगकहँ बिन लखे बुध जन कहहिं प्रमान॥ अनुस्वार अक्षर रहित जानत हैं सब कोय। कह तुलसी जहँलगि वरण तासु रहित नहिं होय॥ आदिहु अन्त-हु है सोई तुलसी और न आन। बिन देखे समुझे बिना किमि कोइ करै प्रमान॥ रहित बिन्दु सब वरणते रेफ सहित सब जान। तुलसी स्वर संयोगते होत वरण पद मान॥ अनु-स्वार सूक्ष्म यथा तथा वरण अलक्ष्य। जो सूक्ष्म अस्थूल सो तुलसी कबहुँ न मूल॥ अनिल अनल पुनि सलिल रज तनगत तनवत होय। बहुरि सो रजगत जल अनल मरुत सहित रवि सोय॥ और भेद सिद्धान्त यह निरखु सुमति कह सोय। तुलसी सुत भव योग बिन पितु संज्ञा नहिं होय॥ संज्ञा कह तब गुण समुझ सुनव शब्द परमान। देखब रूप विशेष है तुलसी वेष बखान॥ होत पिताते पुत्र जिमि जानत को कहु नाहि। जबलगि सुत परसो नहीं पितु पद लहै न ताहि॥ तिमि बरणन संज्ञा करे वरण वरण संयोग। तुलसी होय न वरण कर जबलगि वरण वियोग॥ तुलसी देखहु सफलकहँ यहि विधि सुत आधीन। पितु पद परखि सुदृढ़ भयो कोउ कोउ परम प्रवीन॥ जहँ देखो सुत पद सकल भयो पिता पद लोप। तुलसी सो जानै सुई जासु अमोलिक चोप॥ ख्यात सुबन

तिहुँलोकमहँ महाप्रबल अति सोइ। जो कोइ तेहि पाछे करै सो पर आगे होइ॥ तुलसी होत नहीं कछुक रहित सुवन व्यवहार। तोहीते अघन भयो सब विधि तेहि परचार॥ सुवन देखि भूले सकल भय अति परम अधीन। तुलसी जेहि समुझाइये सो मन करत मलीन॥ मानत सो साँचो हिये सुनत सुनावत वादि॥ तुलसीते समुझत नहीं जो पद अमल अनादि॥ जाहि कहत हैं सकल सो जेहि कह तव सो ऐन॥ तुलसी ताहि समुझि हिये अजहुँ करहु चित बैन॥ तुलसी जो है सो नहीं कहत आन सब कोय। यहि विधि परम विहस्वना कहहु न काकहँ होय॥ गुरु करिबो सिद्धान्त यह होय यथारथ बोध। अनुचित उचित लखाय उर तुलसी मिटै विरोध॥ सतसङ्गतिको फल यही संशय लहै न लेश। है अस्थिर शुचि सरल चित पावै पुनि न कलेश॥ जो मरबो पद सबन को यह लगि साध असाध। कवन हेतु उपदेश गुरु सतसङ्गति भव बाध॥ जो भावो कछु है नहीं झूठो गुरु सतसङ्ग। ऐसि कुमति ते झूंठ गुरु सन्तनको परसङ्ग॥ जौलै लखि नाहीं परत तुलसी परपद आप। तौलगि सोहि विबश सकल कहत पुत्रको बाप॥ जहँलगि संज्ञा वरण भो जासु कहेते होय। तो तुलसीसे है सबल आन कहा कहु होय॥ अपने नैनन देखि जे चलहिं सुमतिवर लोग। तिनहिं न विपति विषाद रुज तुलसी सुमति सुयोग॥ मृगा गगनचर ज्ञान विन करत नहीं पहिचान। परवश शठ हठ तजत सुख तुलसी फिरत भुलान॥ काह कहो तेहि तोहिको जेहि उपदेशेउ तात। तुलसी कहत सो दुख सहत समुझ रहित हित बात॥ बिन काटे तरुवर यथा मिटै कवन विधि छाँह। त्यों तुलसी उपदेश बिन निःसंशय कोउ नाँह॥ अपनो कर-

तब आप लखि सुनि गुनि आप विचार। तौ ताहिकहँ दुख-दा महा सुखदा सुमति अधार॥ ब्राह्मण वर विद्या विनय सुरति विवेकनिधान। पद्य रति अनद्य अतीत मति सहित दया श्रुति मान॥ विनयकृत्य शिर जासुके प्रतिपद पर-उपकार। तुलसी सो चलौ सही रहित सकल व्यभिचार॥ वैश्य विनय मग पग धरै हरै कटुक घर वैन। सदय सदा शुचि सरलता होय अचल सुख ऐन॥ शूद्र क्षुद्र पथपरि हरै हृदय विप्रपद मान। तुलसी मन समता सुमति सकल जीव सम जान॥ हेतु वरण वर शुचि रहनि रसनि रास सुखसार। चाहन काम सुरा न रस तुलसी सुदृढ़ विचार॥ यथालाभ सन्तोषरत गृह मगबन सगरीत। सो तुलसी सुखमें सदा जिन तनु विभव विनीत॥ रहै जहां विचरैं तहां कमी कहूँ कछु नाहिं। तुलसी तहँ आनन्द सँग जात यथा सँग छाहिं॥ करत कर्म जेहिको सदा सो मन दुखदातार। तुलसी जो समुझै मनहिं तो तेहि तजै विचार॥ कहत सुनत समुझत लखत तेहिते विपति न जाय। तुलसी सबते विलग हैं जबते नहिं ठहराय॥ सुनत कोटि कोटिन कहत कौड़ी हाथ न एक। देखत सकल पुराण श्रुति तापर रहित विवेक॥ समुझत है सन्तोष धन याते अधिक न आन। गहत नहीं तुलसी कहत ताते अबुध मलान॥ कहा होत देखे कहे सुनि समुझे सब रीति। तुलसी जबलगि होत नहिं सुखद रामपद प्रीति॥ कोटिन साधनके किये अन्तरमल नहिं जाय। तुलसी जौ लगि सकल गुण सहित न कर्म नशाय॥ चाह बनी जबलगि सकल तबलगि साधन सार। तामहँ अमित कलेशकर तुलसी देख बिचार॥ चाह किये दुखिया सकल ब्रह्मादिक सब कोय। निश्चलता तुलसी कठिन राम कृपावश होय॥

अपनो करम आपकहँ भलो मन्द जेहि काल। तब जानब तुलसी भई अतिशय बुद्धि विशाल॥ तुलसी जबलगि लखि परत देह प्राणको भेद। तबलगि कैसेके मिटै करम जनित बहु खेद॥ जोइ देह सोइ प्राण है प्राण देह नहिं दोय। तुलसी जो लखि पाय है सो निरदय नहिं होय॥ तुलसीते झूंठो भयो करि झूठे सँग प्रीति। है साँचो हो साँच जब गहै रामकी रीति॥ झूंठी रचना साँच है रचत नहीं अलसात। बरजतहू जागरत बिहठि नेक न बूझत बात॥ करम खरी कर मोह बल अङ्क चराचर जाल। हरत भरत भर हर गनत जगत जोतखी काल॥ कहन काल किल सकल बुध ताकर यह व्यवहार। उतपति थिति लय होत है सकल तासु अनुहार॥ अङ्कुर किशलय दल विपुल शाखायुत वर मूल। फूलि फरत ऋतु अनुहरत तुलसी सकल सतूल॥ कहतब करतब सकल तेहि ताहि रहत नहि आन। जानन मानन आन विधि अनूमान अभिमान॥ हानि लाभ जय विधि विजय ज्ञान दान सनमान। खान पान शुचि रुचि अशुचि तुलसी विदित विधान॥ शालक पालक सम विषम रम भम गम गति ज्ञान। घट घट लट नट नादि जट तुलसी रहित न जान॥ कठिन करम करनी कथन करता कारक काम॥ काय कष्ट कारण करम होत काल सम शाम॥ खबर आतमा बोध वर खर बिन कबहुँ न होय। तुलसी खसम बिहीन जे ते खरतर नहिं सोय॥ चित रति चित्र व्यवहरित बिधि अगम सुगम जय नीच। धीर धरम धारण हरण तुलसी परत न बीच॥ शब्द रूप विवरन विशद तासु योग भव नाम। करता रूप बहु जाति तेहि संज्ञा सब गुणधाम॥ नाम जाति गुण देखि के भयो प्रबल उर भर्म। तुलसी गुरुउपदेश बिन जानि सकै

को मर्म॥ अपन कर्म वर मानिकै आप बँधो सब कोय। कारजरत करता भयो आपन समुझत सोय॥ को करता कारण लखै कारज अगम प्रभाव। जो जहँ सो तहँ तर हरष तुलसी सहज सुभाव॥ तुलसी बिन गुरुको लखै वर्त्तमान विधिरीत। कहु केहि कारणते भयो सूर उष्ण शशि शीत॥ करता कारण कर्मते पर पर आतमज्ञान॥ होत न बिन उपदेश गुरु जो षट वेद पुरान॥ प्रथम ज्ञान समुझै नहीं विधि निषेध व्यवहार उचितानुचितहि हेरि धरि करतब करिय सँभार॥ जब मनमहँ ठहराय विधि श्रीगुरुवरपरसाद। इहि विधि परमातम लखै तुलसी मिटै विषाद॥ बरबस करत विरोध हठि होन चहत अकहीन। गहि गति बक वृक श्वान इव तुलसी परम प्रवीन॥ आक कर्म भेषज विदित लखत नहीं मतिहीन। तुलसी शठ अकवश विहठि दिन दिन दीन मलीन॥ करताहीते कर्म युग सो गुण दोष सरूप। करत भोग करतब यथा होय रङ्क किन भूप॥ वेद पुराणशास्त्र युत निज बुधिबल अनुमान। निज निज करि करि है बहुरि कहु तुलसी परमान॥ विविध प्रकार कथन करै जाहि यथा भवमान। तुलसी सुगुरुप्रसादबल कोउ कोउ कहत प्रमान॥ उर डर अतिलघु होनको भव लघु सुरति भुलान। स्वर्गलाह लखि परत नहि लखत लोहको हान॥ नैनदोष निज कहत नहिं विविध बनावत बात। सहत जानि तुलसी विपति तदपि न नेक लजात॥ करत चातुरी मोहवश लखत न निज हित हान। शुक मरकट इव गहत हठ तुलसी परम सुजान॥ दुखिया सकल प्रकार शठ समुझि परतही नाहिं। लखत न कण्टक मीन जिमि अशन भषत भ्रम नाहिं॥ तुलसी निज मनकामना चहत सुन्यकहँ सेय। वचन गाय सबके विविध कहहु पयस केहि देय॥ बातहि बात

हि बनि परै बातहि बात नसाय। बातहि आदिहि दीप भव बातहि अन्त बताय॥ बातहिते बनि आवई बातहिते बनि जात। बातहिते बर बर मिलत बातहिते बौरात॥ बात बिना अतिशय बिकल बातहि ते हरषात। बनत बात बर बातते करत बात बरघात॥ तुलसी जानु बात बिन बिगरत हर इक बात। अनजाने दुख बातके जानिपरत कुशलात॥ प्रेम बैर औ पुण्य अघ यश अपयश जय हान। बात बीज इन सबनको तुलसी कहहिं सुजान॥ सदा भजन गुरु साधु द्विज जीव दया सम जान। सुखद सुनै रत सत्यव्रत स्वर्ग सप्तसोपान॥ वञ्चक विधिरत नरतनय विधिहिंसा अतिलीन। तुलसी जगमहँ बिदित वर नरकनिशेनी तीन॥ जे नर जग गुण दोषयुत तुलसी वदत बिचार। कबहुँ सुखी कबहूँ दुखित उदय अस्त व्यवहार॥ कारज जगके युगलतम काल अचल बलवान। त्रिविध विकल तेते हटहिं तुलसी कहहिं प्रमान॥ अनुभव अमल अनूप गुरु कलुक शास्त्रगति होय॥ बचै काल क्रम दोषते कहहिं सुबुध सब कोय॥ सब विधि पूरण धामबर राम अपर नहिं आन। ताको कृपाकटाचते होत हिये दृढ़ज्ञान॥ सो स्वामी सो तर सखा सो वर सुखदातार। तात मात आपदहरण सो आसमय अधार॥ सुखद दुखद कारज कठिन जानत को तेहि नाहिं। जानेहुपर बिन गुरुकृपा करतब बनत न काहिं॥ तुलसी सकल प्रधान है वेद विदित सुखधाम। तामहँ समुझब कठिन अति युगलभेद गुणनाम॥ नाम कहत सुख होत है नाम कहत दुख जात। नाम कहत सुख जात दुरि नाम कहत दुख खात॥ नाम कहत वैकुण्ठसुख नाम कहत अवखान। तुलसी तोते उर समुझि करहु नाम पहिचान॥ चारों चौदह अष्टदश रस समुझब भरिपूर। नामभेद समुझे बिना सकल समुझमहँ धूर

वार दिवस निसि मासमित असित वरष परमान। उत्तर दक्षिण आश रवि भेद सकलमहँ जान॥ कर्म शुभाशुभ मित्र अरि रोदन हँसन बखान॥ और भेद अति अमित है कहँ लगि कहिय प्रमान॥ जहँलगि जन देखव सुनव समुझव-कहव सुरीत। भेदरहित कछु है नहीं तुलसी वदहिं विनीत॥ भेद याहि विधि नाममहँ विनु गुरु जान न कोय॥ तुलसी कहहिं विनीत वर ज्यों विरञ्चि शिवहोय॥

इति षष्ठःसर्गः ६॥

तिनहिं पढ़े तिनहीं सुने तिनहिं सुमति परगास। जिन आशा पाछे करे गहे अलख नौसास॥ तबलगि योगी जगतगुरु जबलगि रहै निरास। जब आशा मनमें जगी जग गुरु योगी दास॥ हित पुनीत स्वारथ सबहि अहित अशुचि विन-चाउ। निजमुख माणिक सम दशन भूमि परत औहाउ॥ निज गुणवटत न नागनग हर्षि न पहिरत कोल। गुञ्जा प्रभुभूषण करे ताते बढ़े न मोल॥ देइ सुमन करि वास तिल परिहरि खरि रस-लेत। स्वारथहित भूतल भरे मनमेंचक तन सेत॥ अँसुवन पथिक निराशते तटभुइ सजल सरूप। तुलसी किन वञ्चे नहीं इन सबथ ल केकूप॥ तुलसी मित्र महासुखद सबहि मिलकी चाउ। निकट भये विलसत सुखप एक कृपाकर छाउ॥ मित्र कोप वरतर सुखद अनहित मृदुल कराल॥ द्रुमदल शिशिर सुखात सब सह निदाघ अति लाल॥ खल नेरे गुण मान नहिं मेटहि दाता वोप॥ जिमि-जल तुलसी देत रवि जलद करत तेहि लोप॥ बरषत हरषत लोगसब करषत लखत न कोय। तुलसी भूपति भानुसम प्रजा भागवश होय॥ मालो भानु कृशानु सम नीतिनिपुण महिपाल। प्रजा भागवश होहिंगे कबहिं कबहिं कलिकाल॥

समयपरे सुपुरुष नरन लघुकरि गनिय न कोय। नायक पीपर बीजसम बचैतो तरुवर होय॥ बड़े राम रत जगतमें कै परहित चित जाहि॥ प्रेमपैन निबहौ जिन्हे बड़े सो सबही चाहि॥ तुलसी सन्तनते सुनै सन्तत इहै विचार॥ तनधन चञ्चल अबल जग युगयुग परउपकार॥ ऊँचहि आपद बिभव वर नीचहि दत्त न होत॥ हानिवृद्धि द्विजराजकहँ नहिं तारागण कोय॥ बड़े रतहिं लघुके गुणहिं तुलसी लघुहि न हेत। गुञ्जाते मुक्ताअरुण गुञ्जा होत न श्वेत॥ होहिं बड़े लघु समय सह तो लघु सकहिं न काढ़ि। चन्द्र दूबरो कूबरो तऊ नखतते बाढ़ि॥ उरग तुरग नारी नृपति नरनीचो हथियार। तुलसी परखत रहब नित इनहिं न पलटत बार॥ दुरजन आप समान करि को राखै हितलागि। तपतलोय सह जाहि पुनि पलटि बतावत आगि॥ अन्नतन्त्र-तन्त्रौबिया पुरुष अश्व धन पाठ। पुनि गुण योगबियोगते तुरत जाहिं ये आठ॥ नीच निचाई नहिं तजै जो पावहि सतसङ्ग। तुलसी चन्दनबिटप बसि बिनबिष भय न भुजङ्ग॥ दुरजन दरपणसम सदा करि देखो हिय दौर॥ सनमुखको गति और है बिमुख भये कछु और॥ मितक अवगुण मित्रको परपहँ भाषत नाहिं। कूपछाँह जिमि आपनी राखत आपहि माहिं॥ तुलसी सो समरथ सुमति सुकृती साधु सुजान। जो बिचारि व्यवहरत जग खरचलाभ अनुमान॥ सीख सखा सेवक सचिव सुतिय सिखावन साँच॥ सुनि करिये पुनि परिहरिय परमनरञ्जन पाँच॥ पुष्टिहि निज रुचि काज करि रुष्टहिं काज बिगारि। तिया तनय सेवक सखा मनकेकण्टक चारि॥ नारि नगर भोजन सचिव सेवक सखा अगार॥ सरस परिहरे रङ्गरस निरस बिषा-दबिकार॥ दीरघ रोगी दारिदी कटुबच लोलुपलोग। तुलसी प्राण समानज्यों तुरित त्यागिबे योग॥ धाय लगे लोहा ललकि

खचिउ लेइयनीच। समरथ पापीसों बैर तीन बेसाहो सीच॥ तुलसी स्वारथ सासुहे परमारथ तन पीठि॥ अन्ध कहे दुख पावकहि डिठियारे दियडीठि॥ अनसमझैने सोचवर अवशि समुझिये आप॥ तुलसी आपन समुझिबिन पलपलपर परिताप॥ कूप खनहिं मन्दिर जरत लावहिं धारि बबूर। बोये लुनचह समय बिन कुमतिशिरोमणि कूर॥ निडर अनय करि अनकुशल बीसबाहु सम होय। गयो गयो कह सुमतिजन भयो कुमति कह कोय॥ बहुसुत बहुरुचि बहुवचन बहु अचारव्यवहार इनको भलो मनाइबो इह अज्ञान अपार॥ अपयश योग कि जानकी मणिचोरी कि कान्ह। तुलसीलोग रिझाइबो करसि कातिबो नान्ह॥ माँगि मधुकरी खात जे सोवत पाँव पसारि। पापप्रतिष्ठ बढ़ि परौ तुलसी बाढ़ोरारि॥ लही आँखिकबआँधरहिं बाँझ पूत कब जाय। कब कोढ़ी काया लही जगबहराइचजाय॥ या जगकी बिपरीति गति काहि कहो समुझाय। जल जलिगो लाख बाधिगो जनतुलसी मुसुकाइ॥ कै जूझिबो कि बूझिबो दान कि कायकलेश। चारिचारु परलोकपथ यथा योगउपदेश॥ बुध कि मान सरवेदबन मते खेत सब सींच॥ तुलसी कविगति जानिबो उत्तम मध्यम नीच॥ सहि कुबोल सासति असम पाय अनट अपमान। तुलसी धर्म न परिहरहिं ते वर सन्त सुजान॥ अनहित ज्यों परहित किये आपनहित तमजान॥ तुलसी चारुबिचारमति करिय काज समसान॥ मिथ्यामाहुर सजनकहँ खलहिं गरलसम साँच। तुलसी परसि परात जिमि पारद पावक आँच॥ तुलसी खलबाणी विमल सुनि समुझब हिय हेरि। रामराज बाधक भई मन्दमथराकेरि दान दयादिक युद्धके बीरधीर नहिं आन। तुलसी कहहिं बिनीत इति ते नरवर परमान॥ तुलसी साथी विपतिके विद्याविनय-

विवेक। साहस सुकृत सत्यव्रत रामभरोसो एक॥ तुलसी असमयके सखा साहस धर्मविचार। सुकृतशील स्वभावरिज रामशरण आधार॥ विद्याविनय विवेकरति रीति जासु उरहोय। रामपरायण सो सदा आपदताहिनकोय॥ बिनप्रपञ्च खलभोख-अलि नहिं फल किये कलेश। बामनबलिसों लीन्हिछलि दीन्ह सबहि उपदेश॥ बिनुबकाज बामन बलिहि छलो भलो जिय-जानि। प्रभुता तजि बपुभेतदपि मनते गहनगलानि॥ बढ़ेबढ़े-तेछलकरैं जनम कनौड़ेहोहिं। तुलसी श्रीपति शिरलसैं बलि-बामन गति सोहिं॥ खल उपकार विकारफलतुलसीगानजहान मेखट मरकट बणिक बक कथा सत्य उपखान॥ ज्यों मूरख उपदेशके होते योग जहान। दुरयोधन कहबोधकिन आयेश्याम सुजान॥ हितपर बढ़त विरोध जब अनहितपर अपमान। राम-विमुख विधि बामगति सगुन अगाय अमान॥ साहसही सिख कोपबस किये कठिन परिपाक। घठ सङ्कटभाजन भये हठि कुजतौ कपिकाक॥ मारि सौंह करि खोजलें करिमतसब बिन-बास। मुये नीच निमोचते जे इनके विश्वास॥ रीक आपनी बूझ पर खीझ विचारविहीन। तेउपदेशन मानहीं मोह महोद-धि मीन॥ समुझि सुनीत कुनीतरत जागतहीरहसाय। उपदे-शिबोजगाइबो तुलसी उचित न होय॥ परमारथ पथमत समु-झि लसत विषय लपटान। उतरि चिताते अधजरी मानहुँ सती परान॥ तजत अमिय उपदेशगरु भजत विषय विषखान। चन्द्रकिरणचोखे पयस चाटत जिमि शठश्वान॥ सुरसदतन तीरथपरिन निपट कुचालि कुसाज। मनहुं मवासे मारि कलि राजत सहित समाज॥ चोर चतुर बटमार भट प्रभु प्रिय मकुआभण्ड। सब भचौ परमारथी कलि सुपन्थ पाखण्ड॥ कोल गँवार नृपाल कलि जवन महामहिपाल। साम न

दाम न भेद कलि केवल दण्ड कराल॥ पाप पलोला कठिन गुरु गोला पुहमपाल॥ राग रोष गण दोषको साक्षी हृदय-सरोज। तुलसी विकसत मित्र लखि सकुचत देखि मनोज॥ वयर सनेह सयानपहि तुलसी जो नहिं जान। ते कि प्रेमपग मग धरत पशु बिन पूछ बखान॥ रामदास यह जायकै जो नर कथहि सयान। तुलसी अपने खाँड़ेहँ खाक मिलावत ज्ञान॥ त्रिविध एक विधि प्रभु अगण प्रगहि सँवारहि राउ। करते होत कृपाणको कठिन घोर घन घाउ॥ काल विलोकत ईशरुख भानु काल अनुहार। रवि हि राहु राजहिं प्रजा बुध व्यवहरहि विचार॥ यथा अमल पावन पवन पाप सुसङ्ग कुसङ्ग। कहिय सुवास कुवास तिमि काल महीश प्रसङ्ग॥ भलउ चलन पथ शोच भय नृप नियोग नय नेम। कुतिय सु-भूषण भूषियत लोह निवारित हेम॥ सुधा कुनाज सुनाज पल आम अशनसम जान। सुप्रभु प्रजाहित लेहि कर सामादिक अनुमान॥ पाके पकए विटप दल उत्तम मध्यम नीच। फल नर लहहिं नरेश तिमि करि विचार मन बीच॥ धरणि धेनु चरि धरम तन प्रजा सुवत्स पन्हाय। हाथ कलू नहिं लागि है किये गोष्ठकी गाय॥ टङ्क टङ्क द्वै परत गिरि शाखा सहस खजूरि। गरहि कुन्दप करि करि कुनय सो कुचाल भुवि भूरि॥ भूमि रुचिर रावणसभा अङ्गदपद महिपाल। धर्म राम नय सोनबल अचल होत तिहुँ-काल॥ प्रीति रामपद नीतिरत धर्म प्रतीय स्वभाव। प्रभुहि न प्रभुता परिहरै कबहुँ वचन मन काय॥ करके कर मनके मनहिं बचन बचन जिय जानि। भूपति भलहि न परिहरहिं विनय विभूति सयानि॥ गोली बाण सुमत्त सुर समुझि उलटि गति देखु। उत्तम मध्यम नीच

प्रभु बचन विचारु विशेखु॥ भल सयाने सलिल दूत राख शीश अपनाव। बूड़त लखि डगमगत अति चपरि चहूँ-दिशि धाव॥ रच्यत राज समाज घर तन धन धर्म सुबाहु। सत्य सुमचिवहि सौंपि सुख बिलसहिं निज नरनाहु॥ रसना मन्त्री दशन जन तोष पोष सब काज। प्रभु कैसे नृप दानवृक बालक राज समाज॥ लकरी डोवा करछुली सरस काज अनुहारि। सुप्रभुजु गहहिं न परिहरहिं सेवक सखा विचारि॥ प्रभु समीप छोटे बड़े अचल होहिं बलवान। तुलसी विदित विलोकहौं कर अँगुली अनुमान॥ तुलसी भल वरणत बढ़त निज मूलहि अनुकूल। सकल भाँति सबकहँ सुखद दलन सहित बिन फूल॥ सधन सगुण सधरम सगण सजन सुसबल महीप। तुलसी जे अभिमान बिन ते त्रिभुवन-के दीप॥ साधन समय सुसिद्ध लहि उभय मूल अनुकूल। तुलसी तीनों समयसम ते महि मङ्गलमूल॥ रामायण अनु-हरत शिव जग भो भारत रीति। तुलसी अठकी को सुनै कलि कुचालिपर पीति॥ सुहित सुखद गुणयुत सदा काल योग दुख होय। घर धन जारत अनल जिमि त्यागे सुख नहिं कोय॥ तुलसी भरवर खम्भ जिमि तिमि चेतन पट माहि। नहिं सूखत पनहूतन सो समुझ सुबुद्ध जन लाहि॥ तुलसी झगरा बड़ेनके बीच परहु जनि धाय। लहै लोह पाहन दोऊ बीच रुई जरि जाय॥ अर्थ आदिहन परिहरहु तुलसी सहित विचार। अन्त गहन सबकहँ सुने सन्त नमत सुखसार॥ अहु उपकार विचार पद माफल हानि बिमूल। अहो जानु तुलसी यतन बिन जाने इव शूल॥ नीच निरावहिं निरस तरु तुलसी सींचहि ऊख। पोषत पावद सनान जल विषय ऊख-के रूख॥ लोक वेदहूँ लौं दगी नाम मूलको पोच। धरम-

राज यमराज यम कहत सकोच न सोच॥ तुलसी देवल रामके लागे लाख करोर। काक अभागे हगि भरे महिमा मय-उ न थोर॥ भलो कहहि जाने बिना कि अथवा अपवाद। तुलसी गाँड़र जानि जिय करहु न हरष विषाद॥ तन धन महिमा धर्म जेहि जाकहँ सह अभिमान। तुलसी जियत विडम्बना परिणामहु गति जान॥ वड़ो विबुध दरवारते भूमि भूप दरबार। जापक पूजक देखियत सहत निरादर भार॥ खग मृग मीन पुनीत किय बनहु राम नेपाल। कुनद बाल रावण घरहि सुखद बन्धु किय काल॥ रामलषण विजयी भये सुनहु गरीबनिवाज। सुखर बालि रावण गये घरहो सहित समाज॥ द्वारे टाट न दै सकहि तुलसी जे नर नीच। निदरहि बलि हरिचन्द्रकहँ किहुका करन दधीच॥ तुलसी निज कीरति चहहि परकीरतिकहँ खोय। तिनके मुंह मसि लागि है मिटहि न मरिहैं धोय॥ नीच चङ्गसम जानि-बो सुनि लखि तुलसीदास। ढील देत महि गिरि परत खैंचत चढ़त अकास॥ सहबासी कांचो भये पुरजन पाक प्रवीन। कालक्षेप किहि विधि करै तुलसी खग मृग मीन॥ वड़े पाप वाढ़े किये छोटे करतब जात। तुलसी तापर सुख चहत विधिपर बहुत रिसात॥ सुमति निवारहि परिहरहि दल सुमनहु संग्राम। सकल गये तनबिन भये साखी यादव काम॥ कलह न जानवि छोट करि कठिन परम परिणाम। लगत अनल अति नीच घर जरत धनिक धनधाम॥ जूझे ते भल बूझिबो भलो जीतते हारि। जहां जाइ जहँ डाइबो भलो जो कीयि विचारि॥ तुलसी तीन प्रकारते हित अनहित पहिचान। बरबस परे परोसवश परे मामला जान॥ दुर-जन बदन कमान सम बचन विमुञ्चत तीर। सज्जन उर

बेधत नहीं क्षमा समाह शरीर॥ कौरव पाण्डव जानिबो क्रोध क्षमाके सोम। पाँचहि मारि नशै सकै सयो निपाते भीम॥ जो मधु दीन्हे ते मरे माहुर देइ न ताउ। जग जिति हारे परशुधर हारि जिते रघुराउ॥ क्रोध न रसना खोलिये बड़ खोलब तरवारि। सुनत मधुर परिणाम हित बोलब बचन विचारि॥ तुलसी मीठो समयते माँगी मिलेजु मीच। सुधा सुधाकर समय बिन कालकूटते नीच॥ पाहो खेती लगन बड़ि ऋण कुब्याज मग खेतु। बैर आपते बड़नते कियो पाँच दुख हेतु॥ रीझ खीझ गुरु देत शिष शिषहि सुसाहब साध। तोरि खाय फल होय भल तरु काटे अपराध॥ चढ़ो बबूरहि चङ्ग जिमि ज्ञानते शोक समाज। करम धरम सुख सम्पदा तिमि जानिबो कुराज॥ पेट न फूटत बिन कहे कहे न लागत ढेर। बोलब वचन विचारयुत समुझि सफेर कुफेर॥ प्रीति सगाई सकल विधि बनिज उपाय अनेक। कल बल छल कलि-मल मलिन डहकत एकहि एक॥ दम्भसहित कलि धर्म सब छल समेत व्यवहार। स्वारथ सहित सनेह सब रुचि अनुहरत अचार॥ धातु बधी निरुपाधिवर सदगुरु लाभ सुभौत। दम्भ दरभ कलिकालमहँ पोथिन सुनब सुनौत॥ कायर कूर कपूत कलि घरघर सरिस उघार॥ ज्यों जगदीशतो अति भलो ज्यों महीशतो भार। जन्म जन्म तुलसी चहत राम-चरण अनुराग॥ का भाषाका संसकृत विभव चाहिये साँच कामतो आवे कामरी का लै कम्बि कमाच॥ बरण विशद मुक्तासरिस अर्थ सूत्र सम तूल। सतसैया जग बरविशद गुण शोभा सुखमूल॥ वर माला बाला समलि उर धारै यत नेह। सुख शोभा सरसाय नित लहै रामपतिगेह॥ भूप कहहिं लघु गुणिनकहँ गुणी कहहिं लघु भूप। महि गिरि गत दोउ

लखत जिमि तुलसी खरवस रूप॥ दोहा चारु विचारु चलु परिहरि वाद विवाद। सुकृत सोम स्वारथ अवधि परमारथ मरयाद॥

इति सप्तमः सर्गः॥

इति॥

विजया-वटिका।

अनेक प्रसिद्ध डाक्तर कविराज वैद्य कहते हैं ज्वरादि रोगोंकी ऐसी महौषध अभीतर और कभी ईजाद नहीं हुई। ज्वर होनेका लक्षण आ गया है शरीर हाथ पैरोंमें हड़फूटन होने लगी है जम्हाई आने लगी है आंखोंमें गर्मी आ गई है—ऐसे मौकेपर तीन तीन घण्टे पीछे एक एक करके दो विजया-वटिका मात्र खालेनेसे ज्वर आनेका भय नहीं रहेगा। विजया-वटिका तन्दुरुस्तीकी हालतमें खानेसे और रोगोंसे जकड़ जानेका भय नहीं रहता।

विजया वटिकाका मूल्यादि।

वटिका	संख्या	मूल्य	डाकमहसूल	पैकिङ्ग	वी० पी०
१नं०	१८ गोली	॥=)	।)	=)	⁄)
२नं०	२६ गोली	१=)	।)	=)	⁄)
३नं०	५४ गोली	१॥=)	।)	=)	⁄)
बहुत बड़ी—गृहस्थीके कामकी डबिया अर्थात्					
४नं०	१४४ गोली	४।)	।)	=)	=)

विजया वटिकाका अलौकिकत्व।

रोगीकी नाड़ीपर दिन रात ज्वर है, प्लीहाकी ऐंचातानी और यकृत्से तड़पड़ाता हुआ कष्ट पाता है, उसका हाथ, पांव, मुंह सूज गया है, आंखें पीली हो गई है; नाकसे नकसीर फूटती है—ऐसे विविध व्याधिग्रस्थ रोगी भी विजया-वटिकासे अच्छे हुए हैं और जब आदमीको प्लीहा, यकृत कुछ नहीं है, ज्वर भी नहीं है, अच्छा शरीर है,—उस समय भी विजया-वटिका सेवनसे भूख बढ़ेगी, शरीरका लावण्य बढ़ेगा। इसीसे विजया-वटिका विचित्र है।

मिलनेका पता,—बी० बसु० एण्ड कं०—७९नं० हेरिसन रोड, कलकत्ता।

बी० बसु एण्ड कम्पनीका

हाथीमार्का सालसा।

सुगन्धयुक्त और सुस्वाद है।

हिन्दुस्थानी लोग यौवन होमें वृद्ध हो जाते हैं। बत्तीस वर्षकी उमरसे पहले ही कितनोंका अङ्ग शिथिल हो जाता है। बयालिस वर्षकी उमरमें कितने ही सचमुच बूढ़े हो जाते हैं। बी० बसु० एण्ड कम्पनीका सालसा पीनेसे आदमी सहजमें बूढ़ा न होगा। शरीर दुरुस्त रहेगा। जो साठ वर्षके बूढ़े हैं, कमर झूक गई है और मांस लटक गया है, तीन महीने यह बी० बसु एण्ड कम्पनीका सालसा पीके देखें शरीरमें नई जवानीका उभार होगा, बलवीर्य्य बढ़ेगा, नये आदमी बन जावेंगे। लड़के बच्चे, पुरुष स्त्री, सब बी० बसु एण्ड कम्पनीका सालसा सेवन करें। नाना प्रकारके पारेका घाव, नाना प्रकारके चर्म्म-रोग, सूखी खाज, गर्म्मीके घाव, वातरोग, जोड़ोंका दर्द, अङ्गोंका दर्द, बवासीर, भगन्दर, अम्लादि नाना रोग आराम होते हैं।

हाथीमार्का सालसाका मूल्यादि।

		मूल्य	डा: म:	पैकिङ्ग
१ नं०	आध पावकी शीशी	॥≈)	॥)	≈)
२ नं०	पावभरकी शीशी	१≡)	॥)	≈)
३ नं०	डेढ़ पावकी शीशी	१॥≈)	१)	≡)

लिखनेका पता,—बी०बसु एण्ड कम्पनी, ७९नं० हेरिसन रोड, कलकत्ता